CULTURE AND CIVILISATION

COMMON COURSE IN HINDI

For

BA /B Sc

IV SEMESTER

(2011 Admission)

UNIVERSITY OF CALICUT

SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION

CALICUT UNIVERSITY PO, MALAPPURAM, KERALA, INDIA - 673 635

118

UNIVERSITY OF CALICUT

SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION

BA / B Sc

IV SEMESTER

COMMON COURSE IN HINDI

CULTURE AND CIVILISATION

Prepared by : *Dr. Anna Salley,*
Assistant Professor,
Malabar Christian Collge, Calicut.

Scrutinized by : *Dr. Pavoor Saseendran,*
(Retd. Professor),38/1294, Appughar,
Edakkad, Kozhikkode.

Layout: Computer Section, SDE

©
Reserved

CONTENTS **PAGE**

अध्याय १ ५

अध्याय २ १०

अध्याय ३ १४

अध्याय ४ १७

अध्याय ५ २२

अध्याय ६ २५

अध्याय ७ २७

अध्याय ८ ३२

अध्याय ९ ३५

अध्याय १० ३७

अध्याय ११ ३९

अध्याय १२ ४१

अध्याय १३ ४५

अध्याय १४ ४७

अध्याय १५ ४८

अध्याय १६ ५१

अध्याय १७ ५५

अध्याय १८ ५८

अध्याय १ - विषयप्रवेश

१. संस्कृति क्या है?

सुन्दर बनाने, सुधारने और पूर्ण बनाने के प्रयत्न मनुष्य अपनी बुद्धि और सौन्दर्य भावना के विकास से करता है। मानव के इस विकास को संस्कृति कहते हैं।

२. संस्कृति का अर्थ क्या है?

संस्कृति का अर्थ सुधारना, सुन्दर या पूर्ण बनाना है।

३. सांस्कृतिक क्षेत्र के कितने वर्ग होते है? क्या क्या है?

सांस्कृतिक क्षेत्र के तीन वर्ग होते हैं- आध्यात्मिक, कलात्मक तथा सेवात्मक।

४. संस्कृति के विकास के मूलाधार क्या-क्या है?

संस्कृति के विकास के मूलाधार पाँच हैं- प्राकृतिक परिस्थितियाँ, राजनीतिक परिस्थितियाँ, ऐतिहासिक परिस्थितियाँ, महापुरुषों की देन और स्वाभाविक परिस्थितियाँ।

५. संस्कृति के विकास में प्रकृतिक परिस्थितियों का क्या महत्व है?

संस्कृति के विकास में प्राकृतिक परिस्थितियों का सबसे बढ़कर महत्व है। मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए प्रकृति को उपयोग में लाता है। यदि प्रकृति की विषमताओं के कारण उसकी आवश्यकताओं केलिए उसे संघर्ष करना पडता है तो वह प्रकृति को आदर से नहीं देखता। इसके विपरीत यदि प्रकृति उदार हो तो उसके प्रति मानव के मन में सद्भावना उत्पन्न होती है। प्रकृति ही उदारता, सहानुभूति, सहिष्णुता आदि का प्रथम पाठ मानव को पढ़ाती है। एक दार्शनिक को आध्यात्मिक सत्य का आभास प्रकृति से ही प्राप्त होता है। शिल्पी और कलाकार प्रकृति के उपादानों से अपनी कला की सृष्टि करते है। प्रायः प्रकृति के संविधानों के अनुरूप ही भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक एकता का उदय हुआ।

६. संस्कृति के विकास में राजनीतिक परिस्थितियों का महत्व क्या हैं?

किसी देश के सास्कृतिक विकास पर राजनीतिक दशा का प्रभाव पडता है। प्राचीन भारत में राजा संस्कृति का संरक्षक होता था। राष्ट्रीय संस्कृति के प्रति राजा की अभिरुचि होने पर सांस्कृतिक संस्थाओं की संख्या बढ़ने लगती है। यदि राजा राष्ट्रीय संस्कृति के प्रति उदासीन या विरोधी हो तो संस्कृति क्षीण पडेगी।

७. संस्कृति के विकास में ऐतिहासिक परिस्थितियों का क्या महत्व है?

संस्कृति की रूपरेखा के विन्यास में ऐतिहासिक परिस्थितियों का महत्व है। किसी एक देश के विविध जन समुदायों का पारस्परिक सम्पर्क अथवा विदेशी जातियों का सम्पर्क इसमें महत्वपूर्ण है। इससे संस्कृतियों का मिलन होता है। अन्य संस्कृतियों के अच्छे गुणों को अपनाकर अपनी संस्कृति उन्नति कर सकती है।

८. संस्कृति के विकास में महापुरुषों का क्या महत्व है?

अपने विचारों, कृतियों और संदेशों के द्वारा महापुरुषों ने संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण योगादान दिया है। महात्मा गाँधी का स्थान आधुनिक युग की संस्कृति में अपरिमेय है। असंख्य महर्षियों की तपःसाधना और चिन्तन के फलस्वरूप उपनिषदों की रचना हुई है।

९. यथा राजा तथा प्रजा से क्या तात्पर्य है?

राजा के गुणों का आदर्श प्रजा में प्रतिष्ठित होता है।

१०. चौदहवीं शती के इतिहास लेखक अब्दुल्लाह वस्साफ ने क्या लिखा है?

भूतल पर भारत सर्वश्रेष्ठ रहने की जगह है, यह विश्व का सबसे बढ़कर मनोरम भाग है। इसकी धूलि वायु से अधिक पवित्र है और वायु पवित्रता से भी बढ़कर पवित्र है। इसके मनोरम मैदान स्वर्ग के उपवन प्रतीत होते हैं। यदि कहा जाय कि भारत में स्वर्ग है तो आश्चर्य न करना, क्योंकि स्वर्ग भी भारत की तुलना में फीका है।

११. भारतीय प्रकृति के महत्वपूर्ण उपहार क्या-क्या है?

पर्वत, नदी, समुद्र, वन-उपवन, ऋतु, दिन-रात, पशु-पक्षी

१२. हिमालय के ऊँचे शिखरों पर स्थित तीर्थस्थान क्या-क्या हैं?

बदरिकाश्रम, कैलास, गौरी, नन्दा-देवी

१३. दक्षिण भारत के प्रमुख पर्वत क्या-क्या है?

विन्ध्य, मेकल, मलय, महेन्द्र, सह्य

१४. पौराणिक साहित्य के अनुसार समुद्रमन्थन से क्या-क्या मिला?

श्री, अमृत, ऐरावत, विष

१५. प्राचीन भारतीय संस्कृति में किन-किन संस्कृतियों का संगम हुआ?

ग्रीक, शक, कुशन, हूण आदि वर्गों की संस्कृतियों का संगम हुआ।

१६. ऋषि परम्परा के श्रेष्ठ विद्वान कौन-कौन हैं?

याज्ञवल्क्य, जनक, अजातशत्रु आदि हैं।

१७. भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ क्या-क्या हैं? स्पष्ट कीजिए?

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ हैं-देवपरायणता, धर्मपरता, आध्यात्मिकता, कर्मफल तथा जन्मान्तरवाद और सर्वे सुखिन सन्तु।

१) देवपरायणता:- वैदिक संस्कृति की प्रथम विशेषता उसकी देवपरायणता है। भारतीय प्रगति के प्रायः सभी क्षेत्र देवताओं से सम्बद्ध हैं। एक ही पुरुष या ब्रह्म से सृष्टि का विकास माना गया है और उसी ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करके मानव, जीवन के सर्वोच्च उद्देश्य मुक्ति पा सकते हैं। भारतीय मानव की सभी बातों में देवो की छाप थी। वह देववाणी (संस्कृत) बोलता था। वेदों की साहित्यिक निधि भी देवों से मिली थी। वह देवता को प्रसन्न करने के लिए अच्छा काम करता था और देवता के दण्ड से डरकर बुरे कामों से अलग जाता था। भारत की इस देवपरायणता के कारण राष्ट्र की एकता का सूत्रपात हुआ।

२) धर्मपरता:- भारतीय संस्कृति में 'धर्म' शब्द व्यापक अर्थवाला है। धर्म के अन्तर्गत प्रायः उन नियमों का समावेश किया गया है, जिनसे व्यक्ति के अभ्युदय के साथ ही समाज की अधिभौतिक और आध्यात्मिक प्रगति हो। जीवन के प्रथम श्वास से अन्तिमश्वास तक मानव कैसा व्यवहार करे और उसके साथ दूसरे कैसा व्यवहार करे, यह धर्म कहलाता है। वैदिक धर्म ग्रन्थों में बताया गया है कि मानव संस्कारों के द्वारा अपनी योग्यता किस प्रकार बढ़ाए, चार आश्रमों में अपने व्यक्तित्व का विकास किस प्रकार करे, कैसा भोजन और पान व्यक्तित्व के विकास केलिए उपयोगी है, शरीर की शुद्धि कैसे की जाए, कुटुम्ब और समाज में नागरिक कैसा व्यवहार करे आदि।

३) आध्यात्मिकता:- प्राचीन भारत में अधिभौतिक और आध्यात्मिक दोनों पद्धतियों पर चलनेवालों ने उन्नति की। अधिभौतिक पथ पर चलनेवाला सांसारिक वैभव से सम्पन्न हुआ और आध्यात्मिक पथ पर चलनेवाला अधिभौतिक वस्तुओं से छुटकारा पा जाता था। आध्यात्मिक प्रवृत्तियों को अपनानेवाले को समाज ने प्रतिष्ठा प्रदान की। सम्राट भी उसके सामने नतमस्तक था।

४) कर्मफल और जन्मान्तर वादः- मनुष्य को अपने कर्मों का फल भोगना पड़ता है, इस सिद्धान्त को प्रायः सभी संस्कृतियों ने अपनाया। इस धारणा से भारतीय समाज में सदाचार की प्रतिष्ठा हुई और व्यक्तिगत आचरण की अच्छी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिला।

५) सर्वे सुखिनः सन्तुः- भारतीय संस्कृति अपने सुख की कामना ही नही, उसके साथ सब के सुख की कामना रखती है। वैदिक संस्कृति में इससे भी श्रेष्ठ भावनाएँ हैं। आदर्श मानव ने अपनेलिए वैसी वस्तुओं का उपयोग कम से कम किया, जिनसे किसी अन्य प्राणी को कष्ट हो। इसका उदाहरण हम महात्माओं के चरित्रों में देख सकते हैं।

१८. संस्कृति ज्ञान के साधनों में संस्कृत का क्या महत्व है?

संस्कृत भाषा के दो रूप प्राचीन और वैदिक तथा नवीन अथवा लौकिक हैं। वैदिक संस्कृत में हमारी संस्कृति के पुराने ग्रन्थ वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद कोटि के ग्रन्थों की रचना हुई थी। आदिकाव्य वात्मीकिकृत रामायण और व्यासकृत महाभारत संस्कृत के हैं। संस्कृत में काव्यग्रन्थों के साथ ही साथ शिल्प शास्त्र, अर्थ-शास्त्र, नीति-शास्त्र, व्याकरण, ज्योतिष, छन्द-शास्त्र, काव्य शास्त्र, गणित और आयुर्वेद विषयक ग्रन्थों की रचना हुई है। संस्कृति की दृष्टि से संस्कृत के स्मृति और पुराण ग्रन्थों का अत्यधिक महत्व है।

१९. प्राकृत साहित्य की मुख्य तीन शाखाएँ क्या-क्या हैं?

पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश।

२०. संस्कृति ज्ञान के साधन क्या-क्या हैं?

पूर्वजों की साहित्य कृतियाँ, शिलालेख, ताम्रपट्ट, मुद्रा, शिल्प, अस्त्र-शास्त्र आदि।

२१. वैदिक संस्कृत में किन किन ग्रन्थों की रचना हुई?

वेद, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद

२२. प्राचीनकाल से प्रसिद्ध नगरों के नाम लिखो?

तक्षशिला, सारनाथ, पाटलिपुत्र, नालन्दा, कौशाम्बी।

२३. भारत वर्णन द्वारा किन-किन विदेशियों ने अपने देश के साहित्य को समृद्ध किया?

ग्रीस के हेरोडोटस, मेगस्थनीस, प्लीनी, चीन के फाह्यान, ह्वैनसांग, अरब के सुलेमान, अबूजैदल हसब, इब्नखुर्दवा, अलमसूदी, अल इदरीसी और फारस का अलबेरूनी।

२४. भारतीय संस्कृति का युग-विभाजन क्या है? स्पष्ट कीजिए?

भारतीय संस्कृति को तीन भागों में बाँटा गया है- प्राचीन संस्कृति, मध्ययुगीन संस्कृति और आधुनिक संस्कृति। प्राचीन संस्कृति आदिकाल से लगभग बारहवीं शती ईसवीं तक माना गया है। मध्ययुगीन संस्कृति प्रायः इस्लाम धर्म को माननेवाली जातियों की संस्कृति से विकसित होती है। मध्ययुग में भारत के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, दार्शनिक तथा साहित्यिक धारा विदेशी संस्कृति की धारा से मिली जुली है। आधुनिक संस्कृति का आरम्भ अठारहवीं शती ईसवीं से माना जा सकता है। तब भारतीय संस्कृति योरप की पाश्चात्य संस्कृति के सम्पर्क में आकर नवीन प्रवृत्तियों से समन्वित हुई।

अध्याय २ - वैदिक समाज

१. वैदिक साहित्य के बारे में आप क्या जानते हैं?

वैदिक साहित्य में सर्वप्रथम स्थान ऋग्वेद का है। इसकी रचना आज से लगभग ५००० वर्ष पहले हुई। फिर यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद बने। इन्हें वैदिक संहिता कहते है। वैदिक साहित्य के अन्तर्गत इसके बाद के ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद आते हैं। उपनिषदों की रचना लगभग ८०० ई. पू के पहले हो चुकी थी।

२. वैदिक समाज का संक्षिप्त परिचय दीजिए?

वैदिक समाज में आर्य और आर्येतर ये दो प्रमुख वर्ग थे। आर्यों में ऋषि, ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी सम्मिलित थे। फिर ऋषि ब्राह्मणों के वर्ग में मिल गये। आर्यों के सिवा दास गन्धर्व, राक्षस, पिशाच, पणि आदि जातियाँ थीं। कुछ समय तक इनका आर्यों में संघर्ष भी रहा। फिर इनमें से कुछ आर्यों में धुलमिलकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र बन गये और कुछ अपनी स्वतंत्र सत्ता बनाये रखे।

३. वैदिक समाज की वर्णव्यवस्था का परिचय दीजिए?

वैदिक समाज में वर्ण के आधार पर दो वर्ग बनाये गये। आर्य गोरे थे और अन्य निवासी काले थे। इस प्रकार गौर और श्याम नामक दो जातियाँ चल पडीं। फिर इन दोनों में सम्पर्क बढ़ता गया और गोरे-काले का अन्तर समाप्त हो गया। वैदिक काल के आरंभ में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र जैसे पक्का विभाजन नहीं था। आदमी कोई कर्म या व्यवसाय कर सकता था। अपने व्यवसाय के आधार पर व्यक्ति ऊँचा या नीचा नहीं माना जाता था। एक ही कुटुम्ब में अनेक व्यवसाय के लोग रहते थे। दासी का पुत्र भी ऋषि बनकर समाज का नेता बन सकता था। विभिन्न जातियों के लोग आपस में विवाह कर सकते थे। धीरे-धीरे सुविधा केलिए एक ही कुटुम्ब में एक ही व्यवसाय के लोग रहने लगे और विवाह भी समान व्यवसाय के लोगों के साथ होने लगा। फिर बचपन से ही अपने पूर्वजों के कर्म और आचार-व्यवहार लोग अपना लेते थे। उनकी जाति पूर्वजों की जाति के ही समान हो जाती थी। इस प्रकार जाति का निश्चय कर्म और जन्म दोनों से होने लगा।

४. वैदिक समाज में ब्राह्मण को समाज का मित्र क्यों कहा जाता था?

ब्राह्मण का कर्तव्य था कि जनता को ज्ञान देकर उसे उन्नति का मार्ग दिखाये। वैदिक काल का ब्राह्मण खेती और पशुपालन भी करता था और आवश्यकता होने पर युद्ध भी करने जाते थे। इसलिए

ब्राह्मण को समाज का मित्र कहा जाता था।

५. वैदिक समाज में क्षत्रियों का कर्तव्य क्या था?

क्षत्रियों का मुख्य कर्तव्य राष्ट्र में सुख और शान्ति की स्थापना है। ये प्रजा की रक्षा केलिए शास्त्र धारण करते थे और युद्ध करते थे।

६. वैदिक समाज में आर्थिक दृष्टि से सबसे सम्पन्न वैश्य और शूद्र थे क्यों?

कृषि, पशुपालन और व्यापार वैश्यों के प्रमुख व्यवसाय थे।

व्यापार की वस्तुओं को बनाने का काम प्रायः वैश्य और शूद्र करते थे। इस प्रकार समाज में आर्थिक दृष्टि से सबसे सम्पन्न वैश्य और शूद्र थे।

७. शूद्रों के कितने वर्ग थे?

दो वर्ग थेःशिल्पी वर्ग और दासवर्ग। शिल्पी वर्ग अपनी बनाई वस्तुओं के मूल्य से जीविका चलाता था और दासवर्ग ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा करते हुए उन्हीं के कुटुम्ब के सदस्य बन गये थे।

८. वैदिक कालीन कुटुम्ब कैसा था?

वैदिककालीन कुटुम्ब में माता-पिता, पुत्र और पुत्रवधू होते थे।

इनमें माता-पिता का सबसे अच्छा स्थान था। उनका कर्तव्य कुटुम्ब के अन्य लोगों को सदाचारी बनाना था। माता-पिता कुटुम्ब में देवता माने जाते थे। उनकी सेवा करना पुत्र का धर्म था।

९. वैदिककालीन नारी की स्थिति कैसी थी?

वैदिक काल में जननी और जन्मभूमि की महिमा स्वर्ग से बढ़कर हैं- "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि" गरीयसि। कुटुम्ब की स्त्रियों में माता स्नेह और सुख का निधान थी। पुत्रवधू या बहू का कुटुम्ब में बडा आदर था। उसे सम्राज्ञी की उपाधि दी गई थी। पति के वर्ण के हीन वर्ण की कन्याओं से विवाह संभव था लेकिन ऊँचे वर्ण की कन्या से विवाह करने पर रोक थी। स्वयंवर की प्रथा थी। पत्नी धार्मिक कार्यों में पति के साथ होती थी। साधारणतः पुरुष की एक ही पत्नी होती थी। कन्या का कुटुम्ब में स्नेहपूर्ण लालनपालन होता था। उसके सुखी जीवन केलिए माता-पिता विवाह का आयोजन करते थे। विधवा होने पर सती होने की रीति नहीं थी। विधवा का पुनर्विवाह हो सकता

था। स्त्रियाँ अध्ययन करके अध्यापिकाएँ, ऋषिकाएँ बन सकती थी। वेदों में स्त्रियों के रचे मन्त्र भी हैं।

१०. वैदिक समाज का रहन सहन कैसा था?

भोजन-आर्यों के आहार में अन्न, मधु, दूध, दही, घी, शाक, फल आदि प्रमुख थे। पेयों में सबसे प्रिय सोमरस था। कुछ लोग शराब भी पीते थे।

वस्त्र- आर्यों के पहनावे में वास और अधिवास (धोती-दुप्पट्टा) प्रमुख है। उत्सव विवाह आदि अवसरों पर रमणीय वस्त्र पहनते थे। धनी लोग स्वर्ण शिल्पित अंगरखा पहनते थे।

श्रृंगार-शरीर को सुगन्धित रखने केलिए विभिन्न द्रव्यों का उपयोग करते थे। स्त्रियाँ बालों को संवारती थी। पुरुष दाढ़ी रखते थे। सोने के आभूषणों का प्रचार था।

मनोरंजन- संगीत, नृत्य, वाद्य, रथ की दौड, जुआ, शिकार धुडदौड, उत्सव, जलक्रीडा, वनविहार आदि मनोरंजन वैदिककाल में थे।

११. द्रापि या अत्क क्या है?

वैदिक काल में धनी लोग स्वर्ण शिल्पित अंगरसा जैसा वस्त्र पहनते थे। इसे, द्रापि या अत्क कहते थे।

१२. वैदिक समाज के उद्योग तथा व्यापार किसप्रकार था?

१) कृषि- आर्यों का प्रमुख व्यवसाय कृषि था। कृषि करते समय देवताओं की स्तुति होती थी। विविध प्रकार के अन्न, धान जौ, गोहूँ, चने, उडद, तिल, मूँग, मसूर आदि की खेती होती थी। कपास की भी खेती थी।

२) पशुपालन-पशुपालन महत्वपूर्ण व्यवसाय था। गाय और बैलों को सम्पत्ति माना जाता था। घोडे, गदहे, भैस, बकरियाँ और भेडे भी पाली जाती थी। गाय का माता के समान आदर किया जाता था।

३) शिल्प-वैदिक काल में लकडी का काम, वस्त्र निर्माण, धातु का काम, मिट्टी के बरतन बनाना, रथ निर्माण, खानों से रत्न निकालना आदि काम होते थे।

४) कलात्मक व्यवसाय-वैदिकाल में शिल्पकला, चित्रकला, मूर्ति कला आदि की उन्नति हुई थी। राजाओं के भवन, दुर्ग आदि बनाये जाते थे।

५) व्यापार-व्यापार में निष्क नामक मुद्रा का प्रयोग होता था। मूल्य का निर्धारण गायों के द्वारा भी होता था। व्यापारी दूर-दूर जाते थे। समुद्र मार्ग से जाकर विदेशों में भी व्यापार करता था।

१३. वैदिक समाज के राजनीतिक संगठन का परिचय दीजिए?

वैदिक काल के आरंभ में राजा प्रजा द्वारा ही चुना जाता था। फिर यह पद पैतृक बन गया। राजा का ज्येष्ठ-पुत्र उत्तराधिकारी बनाया जाता था। राजा की सहायता केलिए दो संस्थाएँ थी सभा और समिति। दूत और गुप्तचर भी होते थे। बलि के रूप में प्रजा जो देते थे, वही राजा की आय थी। राजा का कर्तव्य था कि प्रजा के कल्याण का प्रयत्न, पापियों और अपराधियों को दण्ड देना प्रजा की रक्षा करना तथा राज्य में शान्ति रखना। उस समय दण्ड बहुत कठोर था। इसलिए अपराध कम थे।

अध्याय ३ - वैदिक धर्म

१.

आकाश-वरुण, सूर्य, विष्णु

वायु - वायु, इन्द्र, रुद्र

पृथ्वी - पृथ्वी, अग्नि, सोम

८. वैदिक धर्म में संस्कार से क्या तात्पर्य है?

संस्कारों में विभिन्न अवसरों पर किसी व्यक्ति की उन्नति और मंगल की कामना की जाती है। संस्कारों में उपनयन और विवाह सबसे महत्वपूर्ण है। घर में पुत्र के उत्पन्न होने पर जातकर्म संस्कार होता है।

९. उपनयन क्या है?

बालक को गुरु के पास ले जाकर उसे विद्यार्थी बना देने की क्रिया उपनयन संस्कार है। इस अवसर पर बडे लोग बालक के विद्यार्थी जीवन की सफलता केलिए आशीर्वाद देते थे। इसके बाद पिता बालक को गुरु के आश्रम ले जाता था।

१०. विवाह संस्कार से क्या तात्पर्य है?

विवाह संस्कार में पिता अपनी कन्या को सुयोग्य वर को दान रूप में सौंपता था। इस समय सब लोग आशीर्वाद देते थे और वर वधू से कहता था कि सौभाग्यवती होने केलिए तुम्हारा पाणिग्रहण करता हूँ। मैं जीवन भर तुम्हारा बनकर रहूँगा।

११. आश्रम किसे कहते हैं? आश्रम कितने हैं?

वैदिक धर्म में सौ वर्ष के सम्पूर्ण जीवन को चार भागों में बाँटा गया था, जिन्हें आश्रम कहते हैं। (१) ब्रह्मचर्य, (२) गृहस्थ, (३) वानप्रस्थ, (४) सन्यास। इनमें से प्रत्येक लगभग पच्चीस वर्ष के हैं।

१२. चार आश्रमों का संक्षिप्त परिचय दीजिए?

१) ब्रह्मचर्याश्रम - इसमें विद्यार्थी आचार्य के पास रहकर शेष तीनों आश्रमों के योग्य होने केलिए शिक्षा प्राप्त करता था। विद्यालय ऋषियों के घर होते थे। वेद की शिक्षा के अलावा व्याकरण, गणित तर्क, नीति, देवविद्या, ब्रह्मविद्या, क्षत्र-विद्या, नक्षत्र विद्या आदि विषय थे।

२) गृहस्थाश्रम - इसमें राष्ट्र की उन्नति में सबसे अधिक योग देने का अवसर मिलता था। वैदिक गृहस्थ कर्मठ होता था। उनकी कामना सहस्र पोष्य अथवा हज़ारों का पोषण करनेवाला बनना था। उन्हें पंचमहायज्ञ करना था।

३) वानप्रस्थाश्रम - गृहस्थाश्रम के बाद वन में रहकर आध्यात्मिक ज्ञान की खोज में प्रकृति की

शरण ली जाती थी। वन केलिए प्रस्थान करना वानप्रस्थ है। इसमें मनुष्य नगरों और गाँवों से कुछ भी सम्बन्ध नहीं रखता था। वह फलमूल खाता था। कुश, वत्कल या मृगचर्म पहनता था। नदियों का पानी पीता था। आश्रम के मुनियों के सत्संग से ज्ञान प्राप्त करता था।

४) सन्यासाश्रम - अपने सर्वस्व का न्यास (त्याग) सन्यास है। सन्यास में सभी कर्मों को छोडकर आध्यात्मिक उन्नति केलिए ब्रह्म के चिन्तन का नियम था। सन्यासी के लिए निरन्तर भ्रमण करते रहना था। वह केवल भिक्षा भाँगने केलिए गाँव जाता था। भिक्षा मिलने पर प्रसन्नता या न मिलने पर दुःख नहीं होता था। सभी प्राणियों के प्रति मित्रता रखता था और ब्रह्म की प्राप्ति कर लेता था।

१३. वैदिक धर्म में मरणोत्तर-विधान क्या है?

वैदिक धर्म में मृत्यु के बाद शव को जलाने की रीति थी। चिता के समीप पितरों की स्तुति होती थी। विश्वास है कि मृत व्यक्ति पितर बनकर यमलोक में सुख से रहेगा। वैदिक युग में आत्मा की अमरता तथा पुनर्जन्म की कल्पना थी। मृत्यु के बाद नरक में कर्म का फल भोगना पड़ता है। जो व्यक्ति ब्रह्म जान लेता, उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

अध्याय ४ - बौद्ध धर्म और संस्कृति

१. गौतम बुद्ध का जन्म कब और कहाँ हुआ?

शाक्यवंश के राजा शुद्धोधन के पुत्र सिद्धार्थ का जन्म कपिलवस्तु में ५६६ ही. पू. में हुआ।

२. सिद्धार्थ को बोधि कैसे प्राप्त हुई?

२८ वर्ष की आयु में सिद्धार्थ ने तपस्या करने का निश्चय किया और गया के निकट एक वन में चले गये। वहाँ छः वर्ष घोर तप किया। उन्होंने अनुभव किया कि तपस्या से कोई लाभ नहीं है। वे स्नान करके एक वट के नीचे बैठकर चिन्तन करने लगे। दूसरे दिन प्रातः काल उन्हें बोधि प्राप्त हुई तब से उस वृक्ष का नाम बोधि वृक्ष पडा।

३. बौद्ध धर्म की शिक्षाएँ क्या-क्या हैं?

आर्यसत्य, अष्टांगिक मार्ग, निर्वाण, चरित्र-निर्माण, शरणत्रय और दस शिक्षापद।

४. आर्यसत्य से क्या तात्पर्य है?

दुःख से मुक्ति पाने केलिए चार बातों का ज्ञान होना आवश्यक है, जिन्हें आर्यसत्य कहते हैं। आर्यसत्य निम्नलिखित है।

(१) दुःख है (२) दुःख का कारण है (३) दुःख दूर किया जा सकता है और (४) दुःख दूर करने का मार्ग है।

५. अष्टांगिक मार्ग किसे कहते है?

दुःख दूर करने का मार्ग अष्टांगिक मार्ग है।

(१) सम्यक् दृष्टि

(२) सम्यक् संकल्प

(३) सम्यक् वाणी

(४) सम्यक् कर्मान्त

(५) सम्यक् आजीव

(६) सम्यक् व्यायाम

(७) सम्यक् स्मृति

(८) सम्यक् समाधि

६. निर्वाण से क्या तात्पर्य है?

बुद्ध के अनुसार इच्छा की पूर्ति न होने से दुःख होता है, साथ ही इच्छा का उत्पन्न होना भी दुःख है। दुःख दूर करने का एकमात्र उपाय इच्छाओं का त्याग है। इच्छाओं का त्याग करने पर निर्वाण प्राप्त होता है। निर्वाण का अर्थ बुझ जाना है।

७. शरणत्रय क्या है?

बुद्ध ने भिक्षुओं केलिए शरणत्रय और दस शिक्षापद का विधान बनाया। शरणत्रय के अनुसार भिक्षु बुद्ध, धर्म और संघ के शरण में जाता था। अभिप्राय यह है कि बुद्ध भिक्षु को गौतम के आचार-विचार आदर्श थे और उनके व्यक्तित्व की छाप भिक्षुओं पर पडती थी। धर्म की शरण लेना पवित्र जीवन का सूचक है। संघ की शरण का मतलब है कि संघ की प्रतिष्ठा रखना और उसकी व्यवस्था न भंग करना।

८. दस शिक्षापद क्या-क्या है?

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, नियत समय के अतिरिक्त भोजन न करना, नृत्य-गीत आदि से विरत रहना, माला, ग्रन्थ आदि का सेवन न करना, दूसरे के द्वारा दी गई वस्तु का त्याग तथा कोमल शय्या पर न सोना।

९. संघ क्या है?

बौद्ध भिक्षुओं के सामूहिक संघटन को संघ कहा जाता था।

१०. महायान के बारे में आप क्या जानते हैं?

बुद्ध की मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों में दो सम्प्रदाय हुए हीनयान और महायान। हीनयान में सनातन नियमानुसार गौतम बुद्ध के उपदेशों पर चलते हुए मनुष्य निर्वाण प्राप्त करता है। महायान में सभी प्राणियों के निर्वाण की योजना है। महायान में साधक दान, शील, प्रज्ञा, वीर्य, क्षान्ति और ध्यान के द्वारा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। महायान में पूजा पद्धति की विशेष प्रतिष्ठा हुई। वन्दना, अर्चना, पापदेशना, बुद्धयाचना आदि महायान की पूजा है। महायान में मूर्तिपूजा बढ़ी।

महायान में गृहस्थ उपासकों की प्रतिष्ठा बढ़ी। इसके अनुसार गृहस्थ भी निर्वाण पा सकते थे। महायान में बुद्ध की उपासना को प्रमुख स्थान मिला। धीरे-धीरे महायान में अनेके वैदिक और पौराणिक देवताओं को माने जाने लगा। महायान पौराणिक धर्म से विशेष प्रभावित है। महायान में अनेक बोधिसत्वों की कल्पना की गई।

११. बोधिसत्व क्या है?

बोधिसत्व उस प्राणी को कहते हैं जो बुद्ध बनने के पथ पर अग्रसर है।

१२. बौद्ध भिक्षुओं के चार तीर्थ क्या-क्या हैं?

बुद्ध के जन्म, बोधि, धर्म-चक्रप्रवर्तन तथा निर्वाण पाने के स्थान आदि चार तीर्थ माने जाते हैं।

१३. विदेशों में बौद्ध कला का प्रचार किस प्रकार है?

बौद्ध कला का चीन, तिबत्त, जापान, लंका, बर्मा, नेपाल तथा पूर्वीद्वीप समूह में प्रभाव हुआ है। चीन में बौद्ध शैली का अनुकरण करके बनायी गई अनेक गुफाएँ हैं। वहाँ बुद्ध की विशाल मूर्तियाँ तथा चित्र हैं। तिब्बत के यात्री भी बौद्ध कला कृतियों को भारत से ले गए। इन में बहुत आज भी वहाँ है। अजन्ता की कला के अनुरूप अनेक चित्रपट वहाँ पाये जाते हैं। जापान के मंदिरों और चित्रों पर बौद्ध कला का प्रभाव है। पूर्वी द्वीपसमूह - जावा, सुमात्रा, बालि-के अनेक बौद्ध विहारों में बुद्ध की मूर्तियाँ तथा चित्र हैं।

१४. बौद्ध साहित्य का परिचय दीजिए?

बौद्धों के सबसे प्राचीन धर्मग्रन्थ त्रिपिटक है। इसकी रचना पाली भाषा में हुई। विनयपिटक, सुत्तपिटक और अभिधम्मपिटक मिलकर त्रिपिटक कहलाते हैं। प्रत्येक पिटक में अनेक ग्रन्थ हैं, अतः इन्हें पिटक या पटारी कहते हैं। सुत्तपिटक में बुद्ध की नैतिक शिक्षाएँ हैं। विनयपिटक में बौद्ध भिक्षुओं के रहन-सहन के नियम हैं। अभिधम्मपिटक में बौद्ध धर्म के दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन है। ईसा की पहली शती में मिलिन्द-प्रश्न नामक एक ग्रन्थ की रचना हुई जिसमें बौद्ध धर्म सिद्धान्तों को प्रश्नोत्तर रूप में समझाया गया है। नागार्जुन का ग्रन्थ 'माध्यमिकशास्त्र' और वसुबन्धु का 'अभिधर्मकोश' भी बौद्ध साहित्य के अन्तर्गत आते हैं। फिर अश्वघोष नामक बौद्ध कवि ने 'बुद्धचरित' और 'सौन्दरनन्द' नामक दो महाकाव्यों की रचना की। अश्वघोष के बाद आर्यसूर ने जातकमाला लिखी जिसमें बुद्ध के पूर्वजन्म की रोचक कथाएँ हैं।

१५. अफगानिस्तान में बौद्धधर्म का प्रचार किसतरह हुआ है?

अफगानिस्तान में हिन्दूकुरा के दक्षिण भाग वैदिक काल से ही भारत का प्रान्त था। अफगानिस्तान के पश्चिम में बहुत भाग चन्द्रगुप्तमौर्य और अशोक के अधीन थे। यहाँ अफगानिस्तान की बारमियान घाटी में बौद्धधर्म के अनेक केन्द्र विहार-विद्यालय के रूप में थे। यहाँ पर बौद्ध भारतीय राजा सातवीं शती में राज्य करता था। आज भी काबूल के उत्तर पश्चिम में कामियान में बुद्ध की १७५ फूट और १०० फूट ऊची मूर्तियाँ हैं। अफगनिस्तान से लेकर कश्यप सागर तक और वहाँ से चीन की सीमा

तक बौद्ध धर्म का प्रसार था। इसमें प्रसिद्ध बौद्ध धर्म के केन्द्र बुखारा, कूचा, कारा, तुर्फान, यारकन्द, समरकन्द और खोतान थे। खोतान का गोमती विहार मध्यएशिया में बौद्ध शिक्षा का सर्वोच्च केन्द्र था। आजकल मध्य एशिया के गोबी मरुस्थल में भी बौद्ध संस्कृति लहराती है।

१६. चीन में बौद्ध धर्म का प्रचार किस प्रकार हुआ?

चीन और भारत के बीच व्यापार ईसा के बहुत पहले ही था। व्यापारियों के साथ अनेक बौद्ध भिक्षु चीन गये थे। चीनी व्यापारी भारत आकर बौद्ध धर्म में दीक्षित होते थे। चीन में बौद्ध धर्म का प्रसार ६५ ई में हुआ। उस समय के राजा मिगती ने बौद्ध धर्म का प्रचार करने का प्रयत्न किया। वे कश्यप, मातंग और धर्मरत्न नामक गुरुओं को चीन ले गये और राजा मिगती स्वयं बौद्ध हो गया। इन गुरुओं ने अनेक धार्मिक ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया।

चीन में धर्म प्रचार केलिए मध्यएशिया से भी बहुत धर्माचार्य आये। उनमें प्रथम है पार्थियन राजकुमार जो लोकोत्तम नामक भिक्षु था। दूसरा, धर्मरक्षक नामक विद्वान था। उन्होंने तृतीय शती में चीनी भाषा में धर्मग्रन्थों का अनुवाद किया। मध्यएशिया से कुमारजीव भी आये जो अधिक प्रसिद्ध थे। कुमारजीव ने कूची में एक विश्वविद्यालय की स्थापना की। चीन के राजा ने कुमारजीव को आमंत्रित किया और उन्होंने अनेक लोगों को बौद्ध बनाया।

पाँचवीं शती में कश्मीर का राजकुमार गुणवर्मा भिक्षु बनकर धर्मप्रचार केलिए चीन पहूँचा। पाँचवी शती में महायान के महान विद्वान गुणभद्र ने चीन में धर्मप्रचार किया। इस शताब्दी में चीन में भारतवासियों की बस्तियाँ बनी गयी।

छठी शती में चीन के राजा की माँग से मगध राजा ने उज्जयिनिवासी परमार्थ को चीन भेजा। इसी शती में दक्षिण भारत से राजकुमार बोधिधर्म चीन पहूँचा जिन्होंने वहाँ महायान की शाखा की स्थापना की।

सातवीं शती में भारत चीन का धार्मिक सम्बन्ध सर्वोच्च शिखर पर था। इसी समय ह्वेनसांग और इत्सिंग भारत आये। ह्वेनसंग ने ७४ ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद किया और इत्सिंग ने संस्कृत चीनी केश बनाया।

१७. कोरिया और जापान में बौद्धधर्म प्रचार कैसा हुआ?

सातवीं शती में कोरिया से पाँच भिक्षुओं ने भारत आकर बौद्धधर्म का अध्ययन किया। बोधिसेन नामक भारतीय बौद्धचार्य ने जापान में बौद्ध धर्म का प्रचार किया। वह जापान के सभी विहारों का

कुलपति बना दिया गया। जापान की शाखा महायान की है।

१८. तिब्बत में बौद्धधर्म का प्रचार कब और कैसे हुआ?

सातवीं शती से तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रचार पढ़ने लगा। वहाँ का राजा गौम्पो अपनी नेपाली और चीनी बौद्ध पत्नियों के प्रभाव से बौद्ध बन गया। आठवीं शती में नालन्दा के कुलपति शान्तरिक्ष वहाँ के राजा से आमंत्रित होकर वहाँ पहूँचे और महोपाध्याय बन गये। वहीं से लामा सम्प्रदाय का आरंभ हुआ। नवीं शती में तिब्बत के राजा के निमंत्रण से अनेक भारतीय विद्वान तिब्बत जाकर तिब्बती भाषा में बौद्ध ग्रन्थों का अनुवाद किया।

१९. बौद्ध धर्म का पतन क्यों हुआ?

महायान ने हीनयान की जड खोद डाली। लेकिन अन्य धर्मों के सामने टिकने केलिए महायान में ऊँचे तत्व नहीं थे। हिन्दू धर्म के महान आचार्यों के सामने महायान के आचार्य विजयी न हो सकता था। इस प्रकार महायान की प्रतिष्ठा कम हो गई। साथ ही महायान के विहार केन्द्रों में सच्चरित्रता नहीं थी। हिन्दुओं ने गौतम बुद्ध को विष्णु का अवतार माना। इससे बौद्ध धर्म वैष्णव धर्म में मिलने लगे। बौद्ध धर्म का सबसे बडा शत्रु इस्लाम धर्म था। इस्लामी आक्रमणों से बचने केलिए जिस दृढ़ता और अस्त्र आवश्यक थे, वह बौद्धों में नही थे।

अध्याय ५- जैन धर्म

१. महावीर कौन है?

जैन धर्म के सप्रसे प्रडे तीर्थंकर है महावीर। वे विहार मे वैशाली के पास कुण्डग्राम में ज्ञातृक नामक क्षत्रिय कुल में सिद्धार्थ और त्रिशला के छोटे पुत्र वर्धमान थे। युवावस्था में वर्धमान को गृहस्थ जीवन के खोखलेपव से अरुचि हो गई। माता-पिता की मृत्यु के प्रनाद तीस वर्ष की आयु में उन्होंने सत्य की प्राप्ति केलिए घर छोड़ दिया और समाधि, ब्रह्मचर्य और तप के द्वारा इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की। ४२ वर्ष की अवस्था में उनको 'कैवल्य' (सर्वोच्च ज्ञान) प्राप्त हुआ। इस समय से वे महावीर नाम से प्रसिद्ध हुए।

२. जैन धर्म की शिक्षाएँ क्या-क्या है?

जैन धर्म के अनुसार मानव-जीवन का उद्देश्य निर्वाण प्राप्त करना है। उसकेलिए गृहस्थों को पाँच अणुव्रतो तथा तीन गुणव्रतों का पालन करना चाहिए। मुनियों केलिए पाँच महाव्रत और अन्य व्रत हैं।

अणुव्रत - अणुव्रत पाँच हैं - अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह।

गुणव्रत – पाँच अणुव्रतों के अतिरिक्त गृहस्थ केलिए समय-समय पर आधिक कठोर व्रतों का पालन करना चाहिए। ये कठोरव्रत गुणव्रत है। गुणव्रत तीन हैं – (१) गृहस्थ को व्रत लेकर निश्चित किए गए प्रदेश में ही निवास करना चाहिए। (२) ऐसे कार्यों से प्रचना चाहिए जिनसे अपना कोई सम्प्रन्ध न हो। (३) गृहस्थ को यह निश्चय करना चाहिए कि मैं इतने परिमाण में ही भोजन करूँगा। अधिक भोग न करूँगा।

महाव्रत - महाव्रत पाँच अणुव्रतों के ही समान है। गृहस्थों केलिए पापों से सर्वथा मुक्त रहना असम्भव है। इसलिए अणुव्रतों का विधान है। पर मुनियों को पापों से पूर्ण रूप से मुक्त रहना आवश्यक है। उन्हें महाव्रतों का पालन करना चाहिए। अर्थात् अहिंसा, सत्य आदि पूरी कठोरता से पालन करना है। महाव्रत के अनुसार अहिंसा में चलते समय भी कहीं हिंसा न हो जाए। इसलिए चलते समय भी किसी जीवजन्तु पौरों से कुचला न जाए।

३. जैन धर्म के अनुसार 'निर्वाण' क्या है?

जैन धर्म के अनुसार शरीर से भिन्न आत्मा को जान लेने पर निर्वाण की प्राप्ति होती है। केवल सन्यासी निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं। निर्वाण प्राप्त करें तो पुनर्जन्म नहीं होता। उसकी आत्मा अदृश्य लोक में चली जाती है जहाँ सिद्ध लोगों की आत्माएँ रहती है। तपोमय जीवन व्यतीत करनेवाले मुनि यदि निर्वाण प्राप्त नहीं करते तो वे देवलोक में देवता प्रनन जाते हैं।

४. त्रिरत्न किसे करते हैं?

महावीर ने फ्रताया कि निर्वाण प्राप्त करने केलिए तीन साधन हैं - सम्यक् झान, सम्यक दर्शन और सम्यक चरित्र। यही त्रिरत्न हैं। तीर्थंकरों से प्राप्त होनेवाला पूर्णझान सम्यक झान है। तीर्थंकरो के उपदेशों मे पूरी श्रद्धा रख्रना सम्यक दर्शन है। तीर्थंकरो के उपदेशानुसार आचरण करना सम्यक् चरित्र है।

५. जैन धर्म मे ईश्वर सम्फ्रन्धी विचार क्या है?

वैदिक धर्म के अनुसार ईश्वर जगत का कर्ता है। लेकिन जैन धर्म में ऐसा नहीं। उनके अनुसार आत्मा अनादि है। कर्म का आवरण दूर होते ही प्रत्येक आत्मा ईश्वर बन जाता है। ईश्वर स्वतंत्र शक्ति नहीं है। ईश्वर के सम्पूर्ण गुण मनुष्य के भीतर है।

६. जैन धर्म की पूजा का नाम क्या है? स्पष्ट कीजिए?

जैन धर्म की पूजा पंचपरमेष्ठी की पूजा है। अर्हत्, सिद्ध, आचार्य उपाध्याय और साधु ये पंच परमेष्ठी हैं। जैनमंदिरों में पंचपरमेष्ठी की मूर्तियाँ मिलती हैं। पूजा में तीर्थंकर की स्तुति होती है और नमस्कार-पूर्वक मूर्ति की प्रदाक्षिण होती है।

७. जैन धर्म के लक्षण क्या-क्या है?

जैन धर्म के दस लक्षण हैं–क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शोच, संयम, तप, त्याग, अकिंचन और ब्रह्मचर्य।

८. जैन धर्म के तीन शल्य क्या-क्या है?

(१) निदानशल्य (२) माया शल्य (३) मिथ्यात्व शल्य।

९. जैन धर्म के कितने भेद (सम्फ्रदाय) हैं?

जैनधर्म के दो सम्फ्रदाय थे – दिगम्फ्रर और श्वेताम्फ्रर। दिगम्फ्रर वस्त्र न पहननेवाले हैं। वे वस्त्रों को निर्वाण की प्राप्ति में फ्राधक मानते हैं, परन्तु श्वेताम्फ्रर निर्वाण प्राप्त करने केलिए नग्न रहना आवश्यक नहीं समझते। श्वेताम्फ्रर के अनुसार स्त्रियों को निर्वाण नहीं मिल सकता। श्वेताम्फ्रर स्त्रियों को भी निर्वाण का अधिकारी मानते हैं।

१०. फ्रौद्ध और जैन धर्म की समानताएँ क्या-क्या हैं?

फ्रौद्ध और जैन धर्म में समानताएँ और असमानताएँ हैं।

समानताएँ-(१) फ्रौद्ध और जैन-धर्म वेद और ईश्वर को प्रमाण नहीं मानते। (२) दोनों धर्म यज्ञ और कर्मकाण्ड में विश्वास नहीं रखते। (३) जातिगत ऊँच-नीच की भावना दोनों अस्वीकार करते है। (४) दोनों धर्मों में आहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह आदि अणुव्रतों की शिक्षा दी गयी है। (५) दोनों धर्म कर्म और पुनर्जन्म का सिद्धान्त मानते हैं।

११. फ्रौद्ध और जैन धर्म की असमानताएँ क्या-क्या है?

फ्रौद्ध और जैन धर्म में कुछ अन्तर भी हैं-

(१) जैनधर्म आत्मा की सत्ता मानते हैं, किन्तु बौद्ध धर्म आत्मा की सत्ता नहीं मानते हैं।

(२) फ्रौद्ध सृष्टि को परिवर्तनशील और नश्वर मानते; किन्तु जैन मानते है कि सृष्टि के मूल में कुछ ऐसे तत्व अपरिवर्तनशील और अनश्वर है।

(३) जैन, कठोर तप, उपवास तथा शरीर को कष्ट देने में विश्वास रखते हैं तो बौद्ध, मध्यमा मार्ग के अनुयायी हैं जिसमें न तो कठोर और न विलासी जीवन होना चाहिए।

१२. जैन धर्म का सांस्कृतिक देन क्या-क्या है?

भारत की सामाजिक स्थिति को जैनधर्म ने प्रभावित किया। इसके अनेकान्तवाद के सिद्धान्त से जनता में साम्प्रदायिक सहिष्णुता और उदार विचारधारा उत्पन्न हुई। लोगों के बीच इसके प्रभाव से ऊँचनीच की भावना कम हुई। अहिंसाव्रत भी उनको प्रभावित किया।

अध्याय ६- इस्लाम धर्म तथा प्रभाव

१. इस्लाम धर्म की शिक्षाएँ क्या-क्या हैं?

इस्लाम के अनुसार प्रत्येक मुसलमान पाँच धार्मिक काम करना चाहिए-

(१) कलमा पढ़ना-इस मन्त्र का पारायण करना कि अल्लाह एक है तथा मुहम्मद साहब उनके दूत है।

(२) नमाज़ पढ़ना – दिन में पाँच बार अल्लाह से प्रार्थना करना।

(३) रोज़ा रखना - रमज़ान के पूरे मास प्रतिदिन केवल एक बार सूर्यास्त होने पर भोजन करना।

(४) ज़कात-अपनी आय का ढ़ाई प्रतिशत दान देना।

(५) हज-मक्का-मदीना के तीर्थ में जाना।

इस्लाम के अनुसार मनुष्य को केवल अल्लाह में विश्वास करना चाहिए। अल्लाह निराकार है। वह प्रेम और दया का आगार है। कुरान में फरिश्तों की मान्यता है जो देव या देवदूत है। कुरान के अनुसार मनुष्य में उच्च और नीच दोनों प्रकार की प्रवृत्तियों रहती है। नीच प्रवृत्तियों को यदि रोका न जाए तो मनुष्य का पतन होता है। उनसे बचने केलिए मनुष्य को सजग रहना चाहिए। कुरान में सभी धर्मे के प्रति सहिष्णुता की सीख भी है। इस्लाम में पूनर्जन्म की मान्यता नहीं है। परन्तु मरने के बाद कब्र में एक दूसरे जन्म का आरम्भ होता है जिसे बरजख कहते हैं। किन्तु मनुष्य को पूर्ण अध्यात्मिकता की प्राप्ति कयामत के बाद ही होती है। कयामत के दिन मनुष्य को अल्लाह के पास जाना पडता है। जिसका पुण्य अधिक होता है वह जन्नत (स्वर्ग) में जाता है और जिसका पाप आधिक है वह दोजख में जाता है।

२. बरजख क्या है?

बरजख वह लम्बी अवधि है जिसमें आत्मा कयामत की प्रतीक्षा करती है। मरने के बाद कब्र में एक दूसरे जीवन का आरंभ होता है वही बरजख है। बरजख के समय आध्यात्मिक जीवन का आभास होता है, किन्तु पूर्ण आध्यात्मिकता की प्राप्ति कयामत के बाद ही होती है।

३. भारत में इस्लाम धर्म का आगमन और शासन कैसे हुआ?

इस्लाम का भारत में प्रवेश अरब व्यापारियों के माध्यम से हुआ। अरब और भारतीय व्यापारी एक दूसरे की वस्तुओं को खरीदने और बेचने के साथ एक दूसरे की रहन-सहन से प्रभावित होते थे।

धीरे-धीरे कुछ मुसलमान व्यापारी दक्षिण भारत के पश्चिमी तट पर बस गए जहाँ उन्हें हिन्दु जनता और राजाओं से सुविधाएँ मिली। फिर अरब के मुसलमानों ने सिन्ध पर आक्रमणा करके उसे अपने अधिकार में कर लिया। इसके फ्राद मुहम्मद गजनवी और मुहम्मद गोरी ने भारत पर आक्रमण किए और तेरहवीं शताब्दी से भारत में मुसलमानों का शासन स्थापित हुआ। सत्रहवीं शताब्दी तक भारत के अधिकांश प्रदेशों में मुगल साम्राज्य स्थापित हुआ।

४. इस्लाम धर्म के प्रचार से भारतीय समाज में क्या-क्या प्रभाव हुए?

इस्लाम धर्म के प्रचार को देखकर भारतीय धार्मिक नेताओं ने अपने धर्म में नई प्रवृत्तियों को विकसित किया क्योंकि हिन्दुओं को अन्य धर्म का चमत्कार प्रभावित न कर सके।

(१) क्रांतिकारी कवियों तथा सन्तों ने समाज से अन्धविश्वासों और कृप्रथाओं को दूर करने का प्रयत्न किया।

(२) जाति-पाँति को खोखलापन बताया गया।

(३) हिन्दुओं में निर्गुण उपासना बढ़ी और मूर्तिपूजा कम हुई।

(४) भारतीय भाषाओं पर इस्लामी प्रभाव पडा है। अरबी, फारसी और उर्दु मुसलमानों की भाषा रही है हिन्दुओं ने भी यह पढ़ी। परिणम यह हुआ कि फारसी और अरबी के शब्द भारत के सभी प्रान्तों के हिन्दुओं की भाषा में घुलमिल गए। हिन्दुओं के बीच हिन्दी के साथ उर्दु की प्रतिष्ठा हुई।

(५) मुसलमान बादशाहों के निर्माण कार्य से भारत की अनेक स्थानों पर शोभा फ्रढ़ी। इसका उदाहरण है ताजमहल।

अध्याय ७- सिक्ख सम्प्रदाय

१. गुरुनानक के बारे में आप क्या जानते है?

गुरुनानक सिक्ख सम्प्रदाय के प्रवर्तक है। उनका जन्म लाहौर में तालाबन्दी नामक गाँव में कृषक खत्रि परिवार में हुआ। विद्धार्थी जीवन के बाद उनके पिता ने उन्हें खेतिबरी में लग दी गयी तो सारा धन साधु सेवा में देकर वे घर वापस आए। विवाह के बाद सरकारी अन्नागार के प्रबन्धक का काम किया। वहीं काम करते समय २९ वर्ष की आयु में बीन नामक नदी में स्नान करते हुए उन्हें 'सत्' नामक परम सत्ता का बोध हुआ और सिक्ख सम्प्रदाय के उपदेशक बन गये।

२. सिक्ख शब्द का अर्थ क्या है?

सिक्ख संस्कृत के 'शिष्य' शब्द से बना है, जिसका अर्थ है गुरु के अनुशासन में रहकर ज्ञान प्राप्त करनेवाला।

३. नानक के अनुसार ज्ञान की त्रिसूत्री क्या है?

नानक ने अपने ज्ञान की त्रिसूत्री की व्याख्या की-

(१)नाम जपो (२) कृत करो और (३) बाँटकर भोगो।

नाम जपो- यह साधना का पथ है। इसमें 'सत्' नाम का जप करना है। सत् नाम है 'वाहे गुरु'। इसमें वह आध्यात्मिक शक्ति है, जिससे मनुष्य गुरु (भगवान सत्) को जान लेता है। नानक ने नाम जपने केलिए 'ओंकार' पद चुना है।

कृत करो – यह सिद्धान्त ईमानदारी और श्रमपूर्वक अपनी जीविका प्राप्त करने केलिए है। जो कुछ पसीने की कमाई नहीं है, वह अपवित्र है, खाने के योग्य नहीं है।

बाँटकर भोगो – जो कुछ ईमानदारी से कमाया है, उसे अकेले मत खाओ। सारे समाज का उसमें भाग है।

४. 'उदासी' माने क्या है? नानक की चार उदासी क्या-क्या है?

गुरु नानक ने धर्मप्रचार केलिए चार महायात्राएँ की हैं, उन्हें उदासी कहते हैं। प्रथम उदासी मे वे पूर्व के हिन्दु तीर्थस्थानों में गये। वे कुरुक्षेत्र, पानिपत, और दिल्ली होते हुए हरद्धार पहँचे। वहाँ उन्होंने लोगों

से कहा कि यदि हरद्धार की गंगा का जल पंजाब के खेतो में हाथ से उलीचकर नहीं पहँचाया जा सकता तो कैसे तुम्हारा अर्ध्यदान का जल सूर्यलोक के पितरों तक पहूँच सकता है। मतलब है कि बिना कर्म के पूजा या तर्पण से ईश्वर सन्तुष्ट नहीं होंगे। काशी में चतुर्वेदी ब्राह्मणों से कहा कि ईश्वर मानव के हृदय में बसता है और नाम-जप की साधना से ईश्वर से तादात्म्य प्राप्त हो सकता। काशी से गया होते हुए वे पटना पहुँचे। वहाँ से आसाम, ढ़ाका होते है कटक पहुँचे। फिर जगन्नाथ पुरी और मध्यदेश गये। मध्यदेश में पिशाच वर्णीं को मनुष्य-मांस से विरति की सीख दी। फिर तालबन्दी लौटे।

दूसरी उदासी में नानक दक्षिण भारत होते हुए लंका पहुँचे। इस यात्रा के स्मारक रामेश्वर, सालुर, भाखर, शिवकांची और कोलोम्बो में है। वे समुद्र के पश्चिमी तट से होते हुए पंजाब लौट आए।

तीसरी उदासी हिमालय के प्रदेशों में हुई। पहले वे कश्मीर पहुँचे और वहाँ से नेपाल होते हुए तिब्बत गये। इस यात्रा में मानसरोवर और कैलास गये। अपने मार्ग मे मिले योगियों से कहा कि भागकर हिमालय पर मत छिपो, समाज में रहकर समाज को सत्पथ दिखाओ।

चौथी उदासी में नानक समुद्र मार्ग से मक्का पहुँचे। वहाँ वे काबा की ओर पैर करके सोये। वहाँ जब रुकनुद्दीन ने उनका पैर दूसरी दिशाओं में किया तो उन्हीं दिशाओं में काप्रा दिखाई पडा। जब उनसे पूछा गया कि तुम हिन्दु हो या मुसलमान, उन्होंने कहा कि मैं मनुष्य हूँ। आचरण का महत्व है धर्म का नहीं। वहाँ से पैदल चलकर बागदाद आये। फिर कन्धार होते हुए वे लौटे।

५. नानक की धार्मिक शिक्षाओं का वर्णन कीजिए?

वैदिक धर्म के अनुरूप नानक को, ईश्वर मोक्ष, स्वर्ग और नरक में विश्वास था। मोक्ष ईश्वर की कृपा से मिल सकता है। कृपा किसी पर भी हो सकती है। मनुष्य को अपने पापों केलिए हृदय से पछताना चाहिए। उसे ईश्वर से डरना चाहिए, अन्य किसी से नहीं। मनुष्य को अहंभाव मिटाकर प्रभु का दास बनना है। उससे प्रेम करने से सभी बुराइयाँ मिट जाती है। प्रेम सारी सृष्टि के प्रति होना चाहिए। नानक जिस परम सप्ता में श्रद्धा रखते थे, वह वैदिक धर्म का ब्रह्म ही है। उसी को उन्होंने गुरु, हरि, सिरजनहार आदि नाम दिये है। वैदिक दर्शन के अनुरूप वे ब्रह्म को सृष्टिकारक और सर्वव्यापी मानते हैं। नानक ने गौतम बुद्ध की भाँति शील की शिक्षा दी। शील के अन्तर्गत विनय, सदाचार, मधुरता, परप्रसाद आदि गुण हैं। नानक ने मूर्तिपूजा, तीर्थाटन, भोजन विषयक खाद्य-अखाद्य के नियम आदि का विरोध दिया। सिक्खों में परवर्ती युग में जो युद्ध प्रियता आयी इसका बीज गुरु नानक के उपदेशों में हैं। उनका कहना है कि धर्म की रक्षा करने केलिए युद्ध किया जा सकता है। सिक्ख धर्म में विशेष ध्यान चरित्र

निर्माण पर दिया गया जिससे लोग अपने कर्तव्य का पालन कर सकें। नानक ने जाति-व्यवस्था को थोथा बताया। उन्होंने गृहस्थ और सन्यासी का अन्तर मिटा दिया। गृहस्थ रहो पर अनासक्त बनकर जैसे पानी में कमल रहता है। नानक ने आध्यात्मिक सिद्धि केलिए उपवास तथा अपने शरीर को कष्ट देनेवाली साधनाओं को व्यर्थ बताया।

६. 'संगत' क्या है?

नानक के शिष्यों और अनुयायियों का समूह संगत है। यह संगत बौद्ध धर्म के संघ से मिलता जुलता है। संगत में आकर प्रतिदिन साधक को गुरु के ज्ञान और प्रेरणा लेनी है। नानक ने संगत का प्रचार किया। नानक ने जो संगत बनाई उसमें जात-पाँत, धर्म, देश, वर्ण आदि का भेद नहीं। उसमें सभी एक दूसरे को भाई, संगी, साथी, साजन, मित्र आदि मानते हैं।

७. नानक का विश्व दर्शन क्या है?

नानक विश्व को सिरजनहार (भगवान) की लीला मानते हैं। वही पुरुष, स्त्री और प्रकृति के रूप में हैं। मनुष्य को अन्त में उसी के साथ एक हो जाना है। इसकेलिए उन्हें सच्चा ज्ञाान और सदाचार होना चाहिए। नानक ने कहा कि सब में परमात्मा का दर्शन करो। नानक का यह विचार वैदिक संस्कृति के 'सर्वे सुखिनः सन्तु' के समान है।

८. गुरुनानक की प्रसिद्ध पुस्तक क्या-क्या है?

जपजी, ओंकार, सिधगोष्ठ

९. सिक्ख धर्म के गुरु कौन-कौन है?

सिक्ख धर्म ने गुरु नानक से लेकर गुरु गोविन्दसिंह तक दस गुरु हुए। नानक, अंगद, अमरदास, रामदास, अर्जुनदेव, हरगोविन्द, हरराय, हरकिसन, तेगबहादुर और गोविन्दसिंह। पाँचवें गुरु अर्जुनदेव ने सिक्खों के मुख्य धर्मग्रन्थ, 'ग्रन्थसाहिब' का संकलन किया। दसवें गुरु गोविन्दसिंह ने मरते समय गुरुग्रन्थ को ही पन्थ का गुरु घोषित किया और आज्ञा दी कि अब आगे कोई व्यक्ति गुरु नहीं होगा।

१०. सिक्खों को शस्त्र धारण करने का आदेश किसने दिया? क्यों?

जहाँगीर पाँचवें गुरु अर्जुनदेव का शत्रु बन गया, क्योंकि उसने खूसरो को शरणदी थी। उसने कहा कि गुरुग्रन्थ साहिब में इस्लाम के विरुद्ध जो बतें हैं उन्हें निकाल दी जाए। अर्जुनदेव ने ऐसा नहीं किया।

जहाँगीर ने उन्हें तप तपाकर मरवा डाला। इस अन्याय को सह लेना सिक्खों केलिए असम्भव था। उन्होंने अनुभव किया कि केवल जप और माला से धर्म की रक्षा संभव नहीं, तलवार भी आवश्यक है। परिणाम यह हुआ कि अर्जुनदेव के बाद छठे गुरु हरगोविन्द ने सिक्खों को शस्त्र धारण करने का आदेश दिया।

११. खालसा सम्प्रदाय की नींव किसने क्यों डाला?

सिक्खों के नवें गुरु तेगबहादुर को मुगल सम्राट औरंगजेब ने इस्लाम न स्वीकार करने के कारण मरवा डाला। उनका पुत्र गोविन्दसिंह बचपन से ही शस्त्र विद्या, खेलकूद, व्यायाम आदि में रमता था। गुरु होने के बाद इन्होंने अपने अनुयायियों केलिए युद्धविद्या की शिक्षा लेना आवश्यक बताया और अपनी सैन्य शक्ति बढाई। गुरु गोविन्दसिंह ने सिक्खों के समाज में नवीन चेतना भर दी और खालसा संप्रदाय की नींव डाली। युद्ध में विजय प्राप्त करना ही इस सम्प्रदाय का लक्ष्य था।

१२. सिक्खों के पाँच ककार क्या-क्या हैं?

पाँच ककार हैं-केश, कंघी, कच्छा, कडा और कृपाण। इनमें केश धारण करने का अर्थ व्रत का संकल्प करना होता है। कंघी बालों की स्वच्छता केलिए, कच्छा फुर्ती केलिए, कड़ा यम, नियम तथा संयम केलिए और कृपाण आत्म रक्षा केलिए थे।

१३. पर धर्मों के बारे में नानक का क्या विचार था?

नानक सभी धर्में का आदर करते थे। लेकिन हर धर्म में जो उसके विपरीत बुराइयाँ, रागद्वेष आदि आती है तो वे खुले शब्दों में विरोध करते थे। ईश्वर के सामने सब धर्म समान है। ईश्वर ही धर्मों का सिरजा है।

१४. हिंसा के बारे में नानक का विचार क्या था?

नानक ने कहा कि केवल शस्त्रों से हिंसा नहीं होती। उनके मतानुसार हिंसा का व्यापक रूप है। व्यापार, सूदखोरी, चोरी आदि सभी से हिंसा संभव है। लोगों का शोषण हिंसा का और एक रूप है।

१५. नारी के बारे में नानक का क्या विचार था?

स्त्रियाँ भी पुरुषों के जैसे आदरणीय है। उन्होंने अवतारों को जन्म दिया है। जो देश, समाज और कुटुम्ब गुणवती नारियों का आदर करता है, वही भगवान के दरबार में ऊँचा स्थान पाता है।

१६. सिक्खों केलिए गुरु गोविन्दसिंह ने क्या-क्या किए?

गुरु गोविन्दसिंह सिक्खों के दसवाँ गुरु थे। उनके पिता-गुरु तेगबहादूर को मुगलसम्राट औरंगजेब ने इस्लाम न स्वीकार करने के कारण मरवा डाला। बचपन से ही गुरु गोविन्दसिंह शस्त्रविद्या, खेलकूद, और शारीरिक व्यायाम में रुचि रखते थे। गुरु होने के बाद उन्होंने अपने अनुयायियों केलिए युद्ध विद्या की शिक्षा लेना आवश्यक बताया और अपनी शक्ति बढ़ाई। इनकी सेना में दूर-दूर से वीर युवक आकर शामिल हो गए। गुरु गोविन्दसिंह ने सिक्खों के समाज में नवीन चेतना भर दी। उन्होंने सिक्ख समाज में खालसा सम्प्रदाय की नींव डाली। युद्ध में विजय प्राप्त करना ही इस सम्प्रदाय का प्रधान लक्ष्य था।

गुरु गोविन्दसिंह शास्त्र और शास्त्र-विद्या दोनों में निपुण थे। इन्होंने अपने दरबार में ५२ कवियों को स्थान दिया था, जिनसे रामायण महाभारत आदि संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद किया गया। गुरु गोविन्दसिंह दृढ़ संकल्पवाले धर्मगुरु, नीतिपरायण नेता, और साहसी शूरवीर होने के साथ-साथ प्रवीण कवि थे।

गुरु गोविन्दसिंह ने सिक्ख समाज में अनेक सुधार किए। उन्होंने सिक्खों को यह शिक्षा दी कि जीवन संघर्ष में विजय पाने केलिए शस्त्र भी आवश्यक है। उन्होंने सिक्ख सम्प्रदाय में भक्त अनुयायियों से अधिक ऊँचा स्थान शूरवीरों को दिया। उन्होंने पाँच ककारो का प्रचलन किया कि इसको धारण करना प्रत्येक सिक्ख केलिए आवश्यक है। पाँच ककार ये हैं कि केश, कंधी, कच्छा, कड़ा और कृपाण।

गुरु गोविन्द सिंह ने सिक्खों को युद्धवीर बनाने केलिए अपनी कविता का उपयोग किया। उन्होंने गुरु-परम्परा का अंत करके उसके स्थान पर ग्रन्थ साहिब को गुरु मानने का आदेश देकर धार्मिक सुधार किया।

अध्याय ८ – ईसाई धर्म और आंग्रेज़ी संस्कृति

१. ईसाई धर्म की शिक्षाएँ क्या-क्या है?

ईसाई धर्म की प्रथम शिक्षा है कि सभी मनुष्य समान हैं। मनुष्य को परस्पर घुणा नहीं करना चाहिए तथा परस्पर सहायता करनी चाहिए। दया, प्रेम और सहनशीलता ईसाई धर्म के प्रमुख सिद्धान्त है। मानव सेवा को ईसा ने सबसे बडा धर्म बतलाया है। ईसा ने आचरण की पवित्रता और अहिंसा पर ज़ोर दिया है। उन्होंने शत्रुओं से भी प्रेम करने का उपदेश दिया। अपने को क्रॅस पर चढ़ानेवालों को क्षमा करने केलिए उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की। उनका कहना था कि जो तुम्हारे गाल पर एक चाँटा मारे, उसके सामने दुसरे गाल भी दिखाना। ईसा ने धन संग्रह न करने की सीख दी है। उन्होंने कहा कि मनुष्य को अपने धन से गरिबों की सहायता करनी चाहिए।

ईसाई धर्म के अनुसार ईश्वर के तीन रूप हैं—पिता, पुत्र और पवित्रात्मा। ईसा ईश्वर के पुत्र हैं। ईसा मनुष्य भी है और ईश्वर भी। ईसा के फिर से पृथ्वी पर आने की भी कल्पना की गई है। जब ईसा पुनःपृथ्वी पर अवतरित होंगे, तब मृत प्राणी कब्र से उठेंगे, पुण्यात्मा की मुक्ति होगी तथा पापी सदा केलिए नरक जायेंगे।

२. भारत में ईसाई धर्म कैसे प्रचलित हुआ?

ईसा मसीह के १२ शिष्य थे। उनमें संत तामस धर्मदूत के रूप में अपने, प्रचारकों के साथ सन् ३० ईस्वीं के आसपास भारत आए। उन्होंने मलबार और मद्रास में ईसाई धर्म का प्रचार किया। उनके बनाए सीरियाई ईसाइयों की पीढ़ियाँ उन्नीससौ (१९००) वर्षों से आज भी दक्षिण भारत में चल रही है। भारत में ईसाई प्रचारक एशिया से ही सबसे पहले आठ, यूरोप से नहीं। यूरोप से मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म का प्रचार सोलहवीं शताब्दी (१७[द्याण]) से आरम्भ हुआ। इनमें संत फ्रांसिस जैवियर प्रमुख है। आरम्भ में रोमन कैथलिक चर्च का कार्य और प्रभाव व्यापक था। गोआ, दमन और देउ में पुर्तगाली शासन स्थापित होने पर पादरियों ने धर्म परिवर्तन का काम किया। डच और फ्रांसीसी लोगों ने भारतीय प्रदेशों पर अधिकार करने के साथ-साथ ईसाई धर्म का प्रचार किया। परन्तु ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने अपने क्षेत्र मे ईसाई मिश्नारियों को प्रचार करने की रोक लगा दी क्योंकि उसे भय था कि कहीं भारतीयों में उनके विरुद्ध उत्तेजना न आए। फिर भी एंग्लिकन प्रोटेस्टेंट चर्च के मिशनरी भारत के दूसरे भागों में अपना कार्य करते रहे। सन् १८१३ में ईस्ट इन्डिया कम्पनी ने प्रतिबन्ध हटा दिया और कुछ ही वर्षों के भीतर इंगलैण्ड, जर्मनी और अमेरिका के अनेक ईसाई मिशन भारत में स्थापित हो गये। उन्नीसवीं शताब्दी में ईसाई मत बहुत तेज़ी से फैला।

३. ईसाई धर्म प्रचार विधि का परिचय दीजिए?

(१) नगरों और क्षेत्रों के केन्द्रों में ईसाईयों के बडे-बडे गिरिजाघर बनवाये गये। उसका वातावरण भव्य और शान्त था। वहाँ पूजा करने तथा उपदेश सुनने केलिए बढ़िया व्यवस्था है। क्योंकि पादरियों का अनुशासन उच्चकोटि का हैं।

(२) गिरिजाघरों के साथ मिशन स्कूल और कालेज खोले गये। वहाँ अंग्रेज़ी की पढ़ाई का स्तर उँचा था। इसलिए युवक आकर्षित होते थे। अंग्रेज़ी शिक्षा के साथ युवक उनकी रहन-सहन, पश्चिमी ज्ञान और मान्यताओं के पोषक तथा यूरोपीय सभ्यता के प्रचारक होते गये। इन संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा होती थी।

(३) व्यावसायिक प्रशिक्षण की संस्थाओं का हमारे देश में अभाव था। क्योंकि इसकी स्थापना केलिए बहुत धन की आवश्यकता थी। भारत में विदेशों से ऐसे धन मिलने लगे और इस प्रकार के स्कूल खोलना आसान हो गया। उनमें शिक्षित अनेक युवक ईसाई प्रचारकों से प्रभावित हुए। उनको व्यवसाय खोलने केलिए पैसे मिल गये और हज़ारों युवक अपने काम-धंधे में स्वावलम्बी हो गये।

(४) अनेक अनाथालय खोले गये जिनमें किसी भी जाति के दीन-हीन लंगडे, बेघर बच्चों का पालन-पोषण किया जाता था।

(५) परोपकार से प्रेरित मिशनो ने जगह-जगह अस्पताल खोले। वहाँ रोगियों की चिकित्सा होने से ईसाइयों के प्रति आकर्षण पैदा होने लगा।

(६) गिरिजाघरों और मेलों मे सभी लोगों को प्रेमपूर्वक आमंत्रित किया जाता था और उपदेशों द्वारा ईसाई धर्म में लाया जाता था। ईसाई होते ही सामाजिक स्तर ऊँचा होता, धन मिलता और जिन्हें अछूत मानते थे उनसे अछूत व्यवहार नहीं था। भारतीय ईसाइयों को सरकारी नौकरी और विदेशों में शिक्षा लेने की सुविधा होती थी। इनसे आकृष्ट होकर लोग ईसाई धर्म अपना लेने लगे।

४. हिन्दु धर्म पर ईसाई धर्म का प्रभाव कैसा रहा?

ईसाई धर्म सीधा-सादा धर्म है जिसमें हिन्दु धर्म जैसा यज्ञ, पूजापाठ आदि की अधिकता नहीं है। ईसाई धर्म की सादगी के प्रभाव को देखकर भारतीय धर्म में भी युग की आवश्यकताओं के अनुरूप विकास लाने की चिन्ता हुई। इस उद्देश्य से राजा राम मोहन राय का ब्रह्मसमाज, दयानन्द का आर्यसमाज और विवेकानन्द का रामकृष्ण मिशन आदि प्रचालित हुए। इनमें वे सारी अच्छाइयाँ

विकसित हुई, जो ईसाई धर्म में भारतीय युवकों को रुचिकर लगा। ईसाई धर्म की प्रचार-पद्धति को भी हिन्दु धर्म के सुधारकों ने अपनाया। शुद्धि आन्दोलन भी ईसाइयों के धर्म-परिवर्तन की प्रतिक्रिया थी।

५. अंग्रेज़ी संस्कृति का समाज पर क्या प्रभाव पडा?

अंग्रेज़ी शसन चाहता था कि अंग्रेज़ी भाषा सीखकर भारत अंग्रेज़ी संस्कृति के रंग में रंग जाए। इसमें उन्हें आंशिक सफलता मिली। परन्तु तिलक और गाँधी जैसे महान उसकी बातों से विरोध करते थे। दुसरी ओर, अंग्रेज़ी संस्कृति में रंगे ऐसा वर्ग भी था जिनको भारतीय धर्म और संस्कृति में दोष ही दोष दिखलाई देते थे। हिन्दु धर्म की सभी बातें उन्हें पाखण्ड प्रतीत हुई। तीर्थों और मन्दिरों के पीछे उन्हें कोई आध्यात्मिक सत्य नहीं दिखाई देता था।

(१) अंग्रेज़ी संस्कृति का एक प्रभाव हिन्दुओं की पारिवारिक प्रणाली पर पड़ा। ईसाइयों में परिवार छोटा था। उनके प्रभाव से हिन्दु परिवारों में सयुक्त परिवारों की प्रथा कम हो गई।

(२) अंग्रेज़ी संस्कृति के कारण स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन हुआ। उच्च घर की स्त्रियों में पर्दे की प्रथा थी तथा स्त्रियों में शिक्षा का प्रचार कम था। अंग्रेज़ी संस्कृति के प्रभाव से भारतीय स्त्रियों में शिक्षा का प्रसार हुआ तथा पर्दे की प्रथा कम हुई।

(३) सती प्रथा समाप्त. हो गयी, साथ ही विधवा विवाह का आरंभ हुआ।

(४) बाल-विवाह और बहु विवाह को अनुचित मानने लगा।

(५) वैदेशिक विवाह योजना का भी हिन्दु समाज पर प्रभाव पडा। अन्तर्जातीय विवाह और प्रेम. विवाह के प्रति विरोध कम हो गया।

(६) अस्पृश्यता धीरे-धीरे कम हो गये। नीची जाति के लोगों की स्थिति में सुधार हुआ। हिन्दु समाज पिछड़ी जातियों की उन्नति केलिए सजग हो उठा।

(७) अंग्रज़ी संस्कृति के प्रभाव से खान-पान के बन्धन ढीले होते गये। क्या खाए, किसके साथ खाए यह समस्या वैज्ञानिक दृष्टि से देखने लगे।

(८) वेशभूषा, गृहविन्यास आदि पर वैदेशिक संस्कृति का प्रभाव पडा है।

अध्याय ९- ब्रह्मसमाज

१. ब्रह्मसमाज का संस्थापक कौन है? परिचय दीजिए?

ब्रह्मसमाज के संस्थापक राजाराम मोहन राय का जन्म बंगल के फ्रार्दमान जिले के राधानगर ग्राम के ब्राह्मण जमींदार परिवार में १७७२ ई में हुआ। वे बंगला, फारसी, अरबी, तथा संस्कृत भाषा में पारंगत थे। इस्लाम तथा सूफी धर्म के ग्रन्थों तथा वेद और वेदान्त का अध्ययन उन्हेंने किया था। सत्रह वर्ष की अवस्था में मूर्तिपूजा तथा अनेक हिन्दु रीति रिवाज़ों के विरुद्ध लेख्र लिख्रने लगे। पिता के साथ मतभेद होने के कारण घर छोडकर तिब्बत जाकर बौद्ध धर्म का अध्ययन किया। राममोहन राय के भाई की मृत्यु होने पर उनकी पत्नी सती हो गई। इससे दुःखी होकर सतीप्रथा को समाप्त करने केलिए हिन्दु ग्रन्थों से प्रमाण देते हुए उन्होंने लेख्र लिख्रा। अंग्रेज़ सरकार को सती प्रथा को कानून द्वारा बन्द करवाने केलिए अनेक पत्र लिख्रे। उनके प्रयत्न से १८२९ में लार्ड विलियम बेंटिक ने सती प्रथा पर रोक लगा दिया। राममोहन राय ने अनेक पत्नियाँ रख्रने की प्रथा का भी विरोध किया। हिन्दु धर्मग्रन्थों से प्रमाण देकर एक पत्नीव्रत को उचित ठहराया।

२. ब्रह्मसमाज की स्थापना कब और कैसे हुई?

राममोहन राय ने १८१५ में आत्मीयसभा की स्थापना की। इसका उद्देश्य हिन्दुओं के अन्धविश्वास को दूर करना और तर्क संगत विचारों को जन्म देना था। वे हिन्दु धर्म और समाज की त्रूटियों और रुढियों को दूर करके नया रूप देना चाहते थे। इसकेलिए उन्होंने १८१६ में वेदान्त कॉलेज की स्थापना की। इसकेफ्रााद उन्होंने एकेश्वरवाद के प्रचार केलिए कलकत्ता यूनिटेरियन सोसाइटि की स्थापना की। इससे भी वे सन्तुष्ट नहीं थे। हिन्दु धर्म और समाज सुधार केलिए उन्होंने एक ऐसी सभा की स्थापना करने का निश्चय किया जो केवल उपनिषदों के सिद्धान्तों को माने। १८२८ ई में उन्होंने कलकत्ते में ब्रह्मसमाज की स्थापना की। ब्रह्मसमाज भारतीय संस्कृति के महान आन्दोलनों में एक है।

३. ब्रह्मसमाज की प्रमुख्र विशेषताएँ क्या-क्या हैं?

ब्रह्मसमाज आरंभ में भारतीय विचारों को लेकर चला। इसमें वेदों को श्रेष्ठ प्रमाण माना जाता था। इसके अधिवेशनों में ब्राह्मणों द्वारा वेदों का पाठ कराया जाता था। साथ ही उपनिषदों का पाठ होता था। राममोहन राय के प्रवचन होते थे। ब्रह्मसमाज इसप्रकार वैदिकधर्म का नया रूप था। ब्रह्मसमाज ने मूर्तिपूजा, जातिभेद, अस्पृश्यता आदि को नहीं माना। उसमें निर्गुण निराकार ब्रह्म की सत्ता को स्वीकार किया। उसमें अवतारों और उसकी पूजा केलिए कोई स्थान नहीं था। सभी धर्में के प्रति उदारता और सहानुभूति इसकी सबसे बडी विशेषता है। जाति और धर्म का विचार न करते हुए सबको समान समझ्रने

और धार्मिक कर्मकाण्डों को छोडने पर उन्होंने ज़ोर दिया। वे धर्म के क्षेत्र के बुद्धिवाद को अपनाने की प्रेरण देते थे।

४. ब्रह्मसमाज में इस्लाम और ईसाई धर्मों की छाया दिखाई पडनेवाले छःसिद्धान्त क्या-क्या है?

(१) ईश्वर नौतिक गुणों की राशि है।

(२) ईश्वर का अवतार नहीं होता।

(३) ईश्वर प्रार्थना से प्रभावित होते हैं।

(४) ईश्वर की प्रसन्नता केलिए कर्मकाण्ड और पूजा, मन्दिर में जाना तथा साधु बनना आवश्यक नहीं है। सभी जाति के आदमी ईश्वर केलिए समान है।

(५) पाप से अलग रहने से ईश्वर प्रसन्न होते हैं।

(६) ईश्वर का ज्ञान अनुभव से होगा। इसकेलिए पुस्तकें पढने की ज़रूरत नहीं।

५. राममोहन राय की मृत्यु के बाद ब्रह्मसमाज की स्थिति क्या थी?

राममोहन राय के बाद ब्रह्मसमाज का नेतृत्व देवेन्द्रकुमार ठाकुर ने ले लिया। राममोहन जी का वेदों और उपनिषदों पर अटल विश्वास था। लेकिन देवेन्द्रकुमार के समय में अनुयायियों में वेद के बारे में विवाद हो गया कि वेद सर्वोपरि है या नहीं। अंत में यह निश्चय किया गया कि वेदों का उपदेश वहाँ मान्य है जहाँ तक हमारी बुद्धि से मेल खाते हैं। इसप्रकार उस समय ब्रह्मसमाज अपने मूल रूप से दूर हटने लगा। १८५७ में केशवचन्द सेन ने ब्रह्मसमाज में प्रवेश किया। ये ईसाई धर्म और यूरोपीय संस्कृति से प्रभुत अधिक प्रभावित थे और ब्रह्ममसाज को उसी ओर मोडने लगे। अन्त में दोनों में मतभेद हो गया और केशवचन्द्र ने सन् १८६६ में अपना समाज अलग कर भारतीय ब्रह्मसाज नाम रखा। देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने समाज को आदि ब्रह्मसमाज नाम दे दिया। केशवचन्द्र ने ईसाई धर्म के सिद्धान्तों के प्रचार को महत्व दिया। उन्होंने अन्य धर्म की उपासना पद्धतियाँ स्वीकार कीं। एक प्रार्थना-संग्रह बनाया गया जिसमें हिन्दु बौद्ध, यहूदी, ईसाई, मुस्लिम आदि अनेक धर्मों की प्रार्थनाएँ थीं। अन्त में केशवचन्द्र के ब्रह्मसमाज में कुछ लोगों ने उनके विरोधी बनकर 'साधारण-ब्रह्मसमाज' बनाया।

अध्याय १० - आर्य समाज

१. आर्य समाज के प्रमुख्र सिद्धान्त क्या-क्या हैं?

आर्य समाज के सिद्धान्तों के अनुसार इस जगत का मूल ईश्वर है। ईश्वर निर्गुण, निराकार सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान तथा न्यायकर्ता तथा कृपालू हैं। ईश्वर की ही उपासना करनी चाहिए। केवल वेद ही प्रामाणिक हैं तथा पुराण आदि निराधार है। आर्यसमाज कर्मफल और पूनर्जनम को मानता है तथा गोरक्षा को हिन्दु धर्म का आवश्यक अंग मानता है। आर्य समाज ने हिन्दु धर्म के वैदिक रूप को समाज के सामने रखा और पौराणिक रुढ़ियों में फँसकर अपना नाश करनेवाले भारत को नवजागरण का संदेश दिया। दयानन्द के अनुसार सच्चा धर्म वैदिक धर्म है उसको अपनाने से भारत विश्व विजयी बन सकता है।

दयानन्द की दृष्टि से योरपीय संस्कृति की अच्छाइयाँ ओझल नहीं थी। उन्होंने योरोपीय उन्नति के कारणों की खोज की है कि वहाँ के लोग आगे बढ़े हैं क्योंकि वे (१) बालविवाह नहीं करते (२)बच्चों को उपयोगी शिक्षा देते हैं (३) विवाह केलिए स्वयंवर करते हैं (४) बच्चों को अच्छी संगति में रखते हैं (५) पारस्परिक परामर्श से काम करते हैं (६) समाज केलिए सर्वस्व बलिदान करने को तत्पर है (७) कर्मण्य हैं (८) स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करते हैं (९)अन्धानुकरण न करके अपनी रहन-सहन अपनाते रहते हैं (१०) कर्तव्य का पालन दृढ़ता से करते हैं (११) श्रेष्ठ जनों की आज्ञा का पालन करते हैं और (१२) देशवासियों की सहायता करते हैं।

२. आर्यसमाज द्वारा सामाजिक सुधार के क्या-क्या कार्य किए?

स्वामी दयानन्द ने परम्परागत जातिप्रथा का विरोध किया। उन्होंने इस वैदिक विचार को मान्यता प्रदान की कि समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि चार वर्णों में विभाजन गुण और कर्म के आधार पर होना चाहिए, जाति के आधार पर नहीं। उन्होंने बालविवाह तथा बेमेल विवाह को अनुचित बताया। लडकों के विवाह की आयु कम से कम बाईस वर्ष तथा लडकियों के विवाह की आयु सोलह वर्ष निश्चित की। आर्यसमाज ने विधवा विवाह के प्रचलन तथा स्थिति सुधारने केलिए महान कार्य किया। अस्पृश्यता दूर करने केलिए आर्यसमाज ने आन्दोलन चलाया।अनेक अनाथालयों और विधवाश्रमों की स्थापना दीन, दुःखी और अनाथों की सहायता केलिए की गई। मूर्तिपूजा का घोर विरोध किया।

३. शुद्धि आन्दोलन क्या है?

आर्य समाज के कार्यों में शुद्धि आन्दोलन का विशेष महत्व है। महर्षि दयानन्द और अनुयायियों ने घोषणा दी कि किसी कारण से हिन्दु धर्म को छोडकर दूसरे धर्म में गए व्यक्ति यदि फिर से अपने धर्म

में आना चाहे तो आ सकता है। इसके अनुसार उन सभी लोगों को फिर हिन्दु समाज और धर्म में यज्ञ, शुद्धि और दीक्षा द्वारा अपना लेने की योजना प्रारम्भ हो गई। पंजाब, राजस्थान और बिहार में ऐसे लाखों व्याक्ति शुद्ध किए गए।

४. शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज ने क्या क्या कार्य किए?

ईसाई मिशनारियों द्वारा स्थापित स्कूलों की शिक्षा से विद्यार्थियों को उन्हें भारतीय पद्धति से शिक्षा देने केलिए अनेक विद्यालयों की स्थापा की। ऐसी संस्थाएँ पंजाब और उत्तरप्रदेश में है। इन संस्थाओं से भारतीय संस्कृति की रक्षा हुई। स्त्री-शिक्षा की ओर भी आर्यसमाज ने ध्यान दिया। बडे-बडे नगरों में कन्या पाठशालाएँ खोली गई। विधवाओं को शिक्षा विधवा आश्रमों में दी जाती थी।

५. रामकृष्ण मिशन की स्थापना कब और कैसे हुई?

ब्रह्मसमाज और आर्यसमाज बडे प्रमुख आन्दोलन थे। लेकिन उनमें कमियाँ थी। इनके प्रवर्तकों ने वेदो उपनिषदों और अद्वैतवाद को सर्वाधिक महत्व दिया। इसलिए सारे हिन्दु धर्म का प्रतिनिधित्व ये दोनों नहीं कर पाये। हिन्दु धर्म सम्पूर्ण रूप में जीता जागता हुआ रामकृष्ण परमहंस में दिखाई देता है। इसलिए उनके शिष्य विवेकानन्द ने उनके नाम पर रामकृष्ण मिशन की स्थापना १८६७ ई. में कलकत्ते के पास वेलूर में की।

अध्याय ११ - श्रीरामकृष्ण मिशन

१. श्रीरामकृष्ण परमहंस का परिचय दीजिए?

रामकृष्ण मिशन की स्थापना श्रीरामकृष्ण परमहंस के नाम पर उनके शिष्य विवेकानन्द ने की। रामकृष्ण का बचपन का नाम गदाधर था। उनका जन्म बंगल के गरीब ब्राह्मण परिवार में हुआ। वे बचपन से ही चिन्तनशील थे। छःवर्ष की आयु में वे समाधिस्थ होने लगे। युवावस्था में वे काली के मन्दिर में पुजारी का काम करने लगे। काली का माता रूप मे दर्शन केलिए वे व्याकुल थे। अतःनिराश होकर प्राणों को समाप्त करने का निश्चय किया तो उन्हें मातृशक्ति का दर्शन हुआ। गाँव लौटकर वे शारदा मणि देवी से उनका विवाह हुआ। फिर भी पति पत्नी का संप्रन्ध सदा आध्यात्मिक रहा। रामकृष्ण ने अपनी पत्नी में भी कालीमाता को देखा। वे केवल मातृ-शक्ति के दर्शन और साधना तक ही सीमित न रहे। उन्होंने वेदान्त के आदर्शों पर चलते हुए ब्रह्म को जानने का प्रयत्न किया। उन्होंने राम, कृष्ण, विष्णु, शंकर, बुद्ध आदि देवताओं की अलग-अलग विधियों द्वारा उपासना करके उनके दर्शन किए। उन्होंने इस्लाम और ईसाई धर्म की साधनाएँ भी की तथा अल्लाह या ईसा मसीह के दर्शन किए। उन्होंने अपने जीवन से यह दिखा दिया कि सभी धर्म मूलरूप से एक हैं। श्रीरामकृष्ण की शिक्षा किसी विद्यालय में नहीं हुई थी। वे अपनी साधना से ऊँचाई पर पहुँचे थे। उन्होंने यह सिद्ध कर दिखाया कि धर्म को केवल बुद्धि या तर्क से नहीं जाना जा सकता। उनमें सर्वधर्म समन्वय की वाणी थी।

विवेकानन्द

घ१) स्वामी विवेकानन्द और उनके जीवन और आदर्श का परिचय दीजिए?

स्वामी विवेकानन्द ने भारत और विश्व की समस्याओं पर विचार कर उनके समाधान निकाले। इसका आधार उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस का विचार है। उन्होंने अपने गुरु के ज्ञानयोग पर आधारित कर्मयोग प्रस्तुत किया।

विवेकानन्द का जन्म सन् १८६३ में कलकत्ता के कायस्थ परिवार में हुआ। विद्यार्थी जीवन में उनकी संगति उन युवकों के साथ थी जो योरोप की संस्कृति से प्रभावित होकर ईश्वर की सत्ता को अनादर की दृष्टि से देखते थे। श्रीरामकृष्ण के सम्पर्क में आकर उनके भीतर आध्यात्मिक प्रतिभा जाग उठी। साथ ही विज्ञान के प्रति उनकी श्रद्धा रही। विज्ञान के द्वारा भारत की दुर्बलता दूर करना वे चाहते थे। सन् १८९३ में विश्व के सभी धर्मों का एक-महासम्मेलन शिकागो में हुआ। उसमें जाकर विवेकानन्द ने जिस ज्ञान और विवेक का परिचय दिया, उससे अमेरिका के लोग मुग्ध हो गए। इसके फ्लाद अमेरिका में विवेकानन्द के भाषणों की धूम मच गई। पश्चिमी देशों के लोग भारत के आध्यात्मिक विचारों और आदर्शों से प्रभावित हुए और उनके शिष्य बन गए। विवेकानन्द ने पश्चिमी देशों के लोगों को भारत की आध्यात्मिकता अपनाने की प्रेरणा दी। पर भारत आकर उन्होंने अपने देशवासियों को पश्चिमी देशों की भाँति आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न और प्रगतिशील बनने का सन्देश दिया। साथ ही उन्होंने भारतवासियों को योरोपीय संस्कृति के अन्धानुकरण से बचने और अपने धर्म तथा संस्कृति पर श्रद्धा रखने का सन्देश दिया। उन्होंने अपनी वाणी से भारतवासियों में यह अभिमान जगाया कि भारतीय संस्कृति, धर्म और साहित्य विश्व में सबसे ऊँचे हैं। उन्होंने भारतवासियों को कर्मठ और उद्योगी बनने की प्रेरण दी। वे दरिद्रनारायण की सेवा करना परम धर्म मानते थे। यही उनका वेदान्त धर्म है।

विवेकानन्द द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशन, ब्रह्मसमाज या आर्यमसाज की भाँति कोई नवीन सम्प्रदाय नहीं था। यह केवल उन लोगों का एक संघ था, जो दरिद्र और दुःखी लोगों की सेवा करने में सुख का अनुभव करते थे। इसका प्रमुख उद्देश्य समाज-सेवा था।

अध्याय १२

१. धर्म और संस्कृति के बारे में गाँधीजी का विचार क्या था? स्पष्ट कीजीए?

भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का जन्म १८६९ में गुजरात के सुदामापुरी (पोरफ्रान्दर) में हुआ था। आपका पूरा नाम मोहनदास करमचन्द गाँधी था। विद्यार्थी जीवन में उनमें कोई विशेष योग्यता नहीं थी, किन्तु वे असाधारण रुप से ईमानदार, श्रद्धालू और सत्यवादी थे। जिस वस्तु को वे नही समझ लेते थे उसे वे छोड़ते नहीं थे। 'सत्यहरिश्चन्चद्र' नाटक देखने के बाद वे हमेशा के लिए सत्यवादी बने। उस नाटक का प्रभाव उनके मन पर अटल प्रभाव डाला था।

गाँधी जी का विचार था कि खराब अक्षर आधूरी शिक्षा की निशानी है। बचपन के नटखट में पडकर गाँधीजी कुसंगति में पड़ा था। उनकी आत्मा ने उन्हें धिक्कारा और इन खराब कामों से वे तुरंत छुटकारा पा गये। इसकेलिए माफी मांगते हुए उन्होंने अपने पिताजी को एक पत्र लिखा और उसके लिए दण्ड भी मांगा था। लेकिन पत्र पढ़ने पर पिताजी की आँखों से मोती की बुँदे टपकी। गाँधी जी भी रोया। यह आपका अहिंसा का पहला पाठ था। अंग्रेज़ों को हटाकर हिन्दुस्तान को स्वतन्त्र करने का स्वप्न गाँधी जी ने बचपन में ही देखा था।

शिक्षा के द्वारा सच्चे नागरिक को बनाना वे चाहते थे। बच्चे की शिक्षा किसी दस्तकारी से शुरु करने को उन्होंने आह्वान किया था। शरीर और बुद्धि दोनों का विकास शिक्षा के माध्यम से होना उन्होंने अनिवार्य माना है।

जीवन में जिस प्रकार हवा और पानी अनिवार्य है उसी प्रकार धर्म भी महत्वपूर्ण है। गाँधी जी का धर्म कोई साप्रदायिक धर्म नहीं है। धर्म उनके लिए एक जीवन विधान है। धर्म के द्वारा किसी व्यक्ति को स्वयं सर्वीच्च सुख और शान्ति मिल सकती है। धर्म मनुष्य को ईश्वर के पास पहँचाता है। गाँधी जी के अनुसार सदाचार धर्म का अभिन्न अंग है। धर्म का विकास होता रहता है। अपने धर्म में अन्य धर्मों की अच्छी बातों का समावेश कर लेना चाहिए। धर्म प्रेम सिखाता है। गाँधी जी के आश्रम में गीता, बाइबिल, खुरान आदि सभी प्रमुख धर्मों के सच्चे गुणों को आपने स्वीकार किया था। उन्हें बौद्ध धर्म का पंचशील और सदाचार, इस्लाम की शांतिप्रियता और ईसाई धर्म का पर्वतोपदेश विशेष रूप से प्रिय लग रहे थे।

पुनर्जन्म का सिद्धान्त और वणश्रिम-प्रथा भारतीय धर्म की उत्तम उपलब्धि के रूप में उन्होंने स्वीकारा है। गाँधी जी के अनुसार श्रद्धा से ईश्वर की पक्की अनुभूति होती है। गाँधी जी की दृष्टि में ईश्वर सत,

चित्, और आनन्द है। वह प्रेममय है। ईश्वर मन्दिर, मूर्ति आदि में नहीं है; और उसे व्रत और तप से भी नहीं पाया जाता।

स्त्री को उन्होंने अहिंसा की मूर्ति माना है। अहिंसा अनन्त प्रेम है। उससे असीम कष्ट सहने की शक्ति प्रकट होती है। गाँधी जी का धर्म सेवा है। मनुष्य का शरीर सेवा करने के लिए मिला है। त्याग में जीवन का सुख है। उनके अनुसार भोग मृत्यु है। गाँधी जी अहिंसाव्रती थे। शत्रु से प्रेम करना सच्चा धर्म है।

गाँधी जी मानते थे कि उपवास से शरीर, आत्मा और मन पवित्र होते हैं। फल स्वरूप मनुष्य अपने कर्तव्य पालन करने के अधिक योग्य होता है। अपने लक्ष्य की प्राप्ति करने में समर्थ होता है। उपवास के बिना प्रार्थना सफल नहीं होती है।

गाँधी जी की दृष्टि में प्रार्थना धर्म की आत्मा और सार है। प्रार्थना केवल वाणी मात्र से नहीं होनी-चाहिए, हृदय से होनी चाहिए। हृदय स्वच्छ करके प्रार्थना करनी चाहिए। वृत्ति प्रधान है, शब्द नहीं। आत्मा के लिए प्रार्थना वैसे ही आवश्यक है जैसे शरीर के लिए भोजन।

गाँधी जी मूर्ति पूजा के विरोधी नहीं थे। मूर्तियों के माध्यम से पूजा में सहायता मिलती हे। मूर्ति पूजा के पीछे जो भाव है उसका वे आदर करते थे।

गाँधी जी कृष्ण को महाभारत और भागवत के कृष्ण से भिन्न मानते थे। कोई मनुष्य ईश्वर नहीं है। ईश्वर मानव रूप में प्रकट होता है। गोरक्षा को वे महत्व देते थे। हरेक भारतीय को गो रक्षा का पालन करना अनिवार्य है।

गाँधी जी के द्वारा पाँच प्रमुख व्रत आश्रम वासियों के लिए निधारित किये गये थे-सत्य, आहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। सत्य को गाँधी जी ईश्वर ही मानते थे। सत्य का दर्शन कर लेने पर मनुष्य ईश्वर के साथ तादात्मय प्राप्त कर लेता है। सभी धर्म सत्य की खोज करते है।

गाँधी जी की अहिंसा केवल प्राणियों को मार डालने तक सीमित नहीं है। अपितु उन्हें अपने स्वार्थ के लिए किसी प्रकार का कष्ट पहूँचाना भी हिंसा है। वे स्पष्ट रूप समझते थे कि मनुष्य का जीवन बिना हिंसा के असम्भव है। वे मानते थे कि सत्य और अहिंसा एक सिक्के के दो तल हैं। अहिंसा का पूर्ण पालन करने के लिए ब्रह्मचर्च आवश्यक है। ब्रह्मचर्य का पालन मनसा, वाचा और कर्मणा होना चाहिए।

भविष्य के लिए निधि-संचय करना परिग्रह है। सत्य का प्रयोग करने वाला और अहिंसावृती कल के लिए कुछ संचय नहीं करता है। दूसरों की अनुमाति से भी किसी वस्तु को लेना, जिसकी हमें ज़रूरी न हो वह चोरी है। दूसरों के विचारों को अपना बताना चोरी ही है।

गाँधी जी के अनुसार सभी मनुष्य समान है। ऊँच-नीच के भाव के वे कटु विरोध करते थे। उन्होंने स्त्री को अहिंसा का अवतार माना है। वे एक-पत्नीव्रत के समर्थक थे। साथ ही साथ वे विधवा विवाह के समर्थन करते थे। स्त्री-पुरुष की समानता में वे विश्वास रखते थे। बाल विवाह के वे विरोधी थे। वे कन्याओं को शिक्षा दिलाना माता पिता का अवश्यक कर्तव्य मानते थे।

वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था के वे खिलाफ थे। अपनी जाति के नाम पर अपने को ऊँचा समझना इस व्यवस्था का बड़ा दोष है। उनके अनुसार सारे मानव समान है। अन्तर्जातीय विवाह का वे प्रोत्साहन करते थे। अस्पृश्यता वे स्वीकार नहीं करते थे। शास्त्रों की वाणी से कुछ लोग इसका समर्थन करता है। वेद मानव को महान, शुद्ध, सत्यवादी, विनयी, सरल, दिव्य और वीर बनाना चाहते है।

गाँधी जी प्रजातन्त्रात्मक सरकार के पक्षपाती थे। इसमें प्रत्येक मनुष्य अपना स्वामी होता है। प्रजातन्त्र का सच्चे स्वरूप का विकास अहिंसा द्वारा ही होता है। गाँधी जी के अनुसार प्रतातन्त्र की जड़ ग्राम राज में जमती है। वे प्रान्तीयता के विरोधी थे। राज्य को धर्मनिरपेक्ष होना चाहिए।

सत्यग्रह में स्वयं कष्ट उठाकर विरोधी पर विजय पाने की योजना रहनी चाहिए। सत्यग्रह अत्याचार से पीडित को करना चाहिए। सत्यग्रह तो अन्तिम उपाय होना चाहिए।

हमारे समाजवाद और साम्यवाद का आधार अहिंसा होना चाहिए। मज़दूर और पूंजीपति, ज़मींदार और किसान सबसे प्रेमपूर्व सहयोग पर होना चाहिए।

शान्ति सेना के सिपाही को अपनी प्रेम पूर्ण और निस्वार्थ सेवा से सफ्रके हृदय पर जीत लेना चाहिए। अहिंसा राज्य में भी पुलिस की आवश्यकता हो सकती है। ऐसी पुलीस के रूपी सिपाही अहिंसा के मानने वाले होगे।

समाज में अमीर और गरीब की समस्या को सुलझाने का सिद्धान्त गाँधी जी को रस्किन की पुस्तक 'अन्टु दिस लास्ट' से मिला है। इसका विवेचना करते हुए उन्होंने कहा है-सबके पास समान शक्ति नहीं है। सबको अपनी आवश्यकता की पूर्ती के लिए आवश्यक धन तो मिलना चाहिए।

गाँधी के मतानुसार सर्वोदय का अर्थ आदर्श समाज व्यवस्था है, जिसका आधार सर्व व्यापी प्रेम है। सर्वोदय में सरल जीवन आवश्यक है। शरीर-श्रम किए बिना किसी को भोजन पाने का अधिकार नहीं है। मानसिक और बौद्धिक श्रम स्वान्तः सुखाय होने चाहिए। स्वदेशी का पालन करते हुए मृत्यु भी हो जाए तो अच्छा है, परदेशी भयानक है। गाँधी जी मशीन और कारखाने के विरोधी नहीं थे।

भारत की आत्मा गाँवों में बसती है, यही था गावों के प्रति गाँधी जी के आकर्षण का कारण। एक सामान्य भाषा के बिना कोई राष्ट्र नहीं बन सकता। हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दु के पचडे में न पडकर राष्ट्रभाषा का ज्ञान प्राप्त करना भारत के विकास के लिए बिलकुल अनिवार्य है।

गाँधी जी का दृढ़ मत है कि कोई संस्कृति इतने रत्न-भंडार से भरी हुई नहीं है, जितनी हमारी अपनी संस्कृति है। वे मानते थे कि कोई संस्कृति जिन्दा नहीं रह सकती, अगर वह दूसरों का बहिष्कार करने की कोशिश करती है। वे घर के चारों ओर दीवारों खडी करने के पक्ष में नहीं थे। वे चाहते थे कि उनके घर के चारों ओर सब देशों की संस्कृतियों की हवा अधिक स्वतन्त्रता के साथ बहती रहे।

अध्याय १३ – केरल का सर्वधर्म समन्वय

१. गोंडवाना महाभूखण्ड के संबन्ध में वैज्ञानिकों का अनुसन्धान क्या है?

आज के भारत भूखण्ड और आफ्रीका भूखण्ड एक ज़माने में मिलकर एक विशाल भूखण्ड था। वैज्ञानिकों ने इस भूखण्ड को गोंडवाना नाम दिया है। वैज्ञानिकों ने अनुसन्धान करके ईजात किया कि बहुत पहले इन दोनों भूखण्डों के मध्य सागर नहीं था। जब भारत अफ्रीका से मिला हुआ था दोनों भूखण्डों में एक ही गोत्र के लोग रहते थे। भूकम्प या जलप्रलय से दोनों भूखण्डों के बीच खाई पडी होगी और जल भर गया होगा। इसी तरह पूरब में ओडीसा से मद्रास तक की ज़मीन अंटार्टीका से मिली हुई थी। अंटार्टीका और बंगाल की खडी से मिले पत्थर के टुकडे एक जैसे है। केरल के पश्चिमी घाट की गुफाओं के वाशिन्दे आदिवासियों मे अफ्रीकी लोगों से समानता देखकर दोनों एक ही गोत्र के जाने जाते हैं। इसलिए वैज्ञानिकों के गोंडवाना महाभूखण्ड की कल्पना सही निकलती है।

२. सिन्धु सभ्यता और, द्रविड सभ्यता का आरंभ कैसे हुआ?

युनानियों के आक्रमण से डरकर भूमध्य सागर के द्वीपों के आदिवासी लोगो ने तीन संघ होकर मध्य ऐशिया से होकर भारत भाग आए। उनमें एक संघ दक्षिण की ओर बढ़ा तो दूसरा पश्चिम भारत में और तीसरा सिन्धु नदी तट पर रह गया। सिन्धु नदी तट पर आए लोगों द्वारा सिन्धु सभ्यता का जन्म हुआ और दक्षिण में बसनेवालों द्वारा द्राविड सभ्यता का आरम्भ हुआ।

३. 'तमिलकम्' किसे कहा जाता था?

दक्षिण में आए द्राविडों के पुरखे जहाँ बस गये थे, उसे 'तमिलकम्' कहा जाता था। उसकी सीमा उत्तर के वेंकटगिरि से लेकर कन्याकुमारि तक थी। तमिलकम् पाण्डिय, चेर, चोल राज्यों में विभक्त था। फिर भी तीनों राज्य सांस्कृतिक भाषायी दृष्टि से एक है। तीनों राज्यों के सांस्कृतिक समन्वय का सबसे बढ़िया उदाहरण है 'चिलप्पतिक्कारम' नामक तमिल महाकाव्य।

४. मुनियरा से क्या तात्पर्य है?

मुनियरा मुनियों का कमरा है। पाँचवीं छठी शती केरल के जैन-बौद्ध धर्म का सुवर्ण युग था। उस समय केरल के चारों ओर बौद्ध-जैन बस्तियाँ विहार-चैत्य, मठ, आराधनालयम आदि बनाये गये। जैन भिक्षुओं को रहने केलिए गुफाएँ, भी बनाई गई हैं। उत्तर और दक्षिण केरळ मे ऐसे अनेक गुफाएँ हैं जो घर फ्रनाने केलिए पत्थर तोडते समय पाए गए हैं। इन्हें मुनियरा कहते हैं। यहाँ से मिट्टि के बर्तन, पत्थर के हथियार आदि मिले हैं।

५. वेलापापान और मरयोर के बारे मे आप क्या जानते हैं?

पाँचवें-छठे शतकों में दो तरह के ब्राह्मण केरल में थे-व्यापार केलिए आनेवाले और धर्म प्रचार केलिए आनेवाले। व्यापार करने केलिए आनेवाले ब्राह्मण यहीं रह गए और यहाँ के जनजीवन में हिल-मिल गए। इन्हें धार्मिक कार्यों में दिलचस्पी न थी। इन्हें 'वेलापापान' कहते थे। यज्ञ आदि करनेवाले दूसरे विभाग के ब्राह्मण मरयोर कहलाए गए। वे बडे पण्डित वेदज्ञ होते थे।

६. शैव-वैष्णव समन्वय केलिए शंकराचार्य ने क्या किया?

आठेवीं सदी में आचार्य शंकर ने केरल के शैवों और वैष्णवों को समझा बुझाकर अच्छे पडोसियों की तरह बर्ताव करना सिखाया। इसके पहले वे दोनों परस्पर लडते थे। शैव माथे पर भस्म लगाते थे, तिलक नहीं लगाते। वैष्णव सिर्फ तिलक लगाते, भस्म नहीं। वैष्णव शिव मन्दिर में नहीं जाते तो शैव विष्णु मन्दिर में जाने से इन्कार करते थे। शंकर ने अपने ही उदाहरण से इस विद्वेष को मिटाया। उन्होंने विष्णु, शिव, दुर्गा आदि की पूजा-उपासना कर कीर्तन-संकीर्तन रचे और शैव वैष्णव समन्वय किया। उन्होंने जैन-बोद्ध नेतोओं को धार्मिक बहस करने और बातचीत करने के जरिए आपस में जानने और परस्पर धार्मिक आदान-प्रदान करने की शर्त रखी। इसी समन्वय और सहमति के कारण आज केरल के मन्दिरों में बौद्ध-जैन मूर्तियाँ देख सकते हैं।

अध्याय १४ - जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य

१. प्रस्थानत्रय क्या है?

प्रस्थानत्रय भगवद्गीता, दशोपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्रों का संग्रह है।

२. शंकराचार्य ने किन-किन सिद्धान्तों को नहीं माना है?

कणाद महर्षी के वैशोषिक दर्शन, गौतम महर्षी के न्यायदर्शन, पतंजलि महर्षी के योगदर्शन, जैमिनी महर्षी के 'विधिपूर्वक कर्म मोक्षप्राप्ति केलिए काफी' है आदि सिद्धान्तों को स्वीकार नहीं किया।

३. आदिशंकर को किन-किन महर्षियों ने प्रभावित किया है?

आदिशंकर को गौडपादाचार्य एवं वादरायण महर्षी ने खूब प्रभावित किया। इसमें गौडपादाचार्य की परम्परा से चलकर ही शंकर ने इस क्षेत्र में प्रवेश किया। अद्वैत वेदान्त को बिना किसी अवगुंठन के प्रस्तुत करनेवाली माण्डूक्यकारिका के रचयिता गौडपाद है। ब्रह्मसूत्र के रचयिता बादरायण महर्षि ने अद्वैतदर्शन को अनश्वर बना दिया। इन दोनों ने वैदिक सत्ता को अपने दर्शन के जीवश्वास रूपी परम तत्म के रूप में अपना लिया है।

४. वेदोक्ति धर्म कितने प्रकार के हैं?

दो प्रकार के हैं – प्रवृत्ति लक्षित धर्म और निवृत्ति लक्षित धर्म।

५. जीव और ब्रह्म के बारे में शंकराचार्य का मत क्या है?

जीव ब्रह्म का अंश नहीं है, ब्रह्म ही है-

"ब्रह्मैवाहं समं शान्तः

सच्चिदानन्द लक्षणाः

नाहं देहद्य सद्रूपो"

अर्थ यह कि मैं सम, शान्त एवं सच्चिदानन्द लक्षणों से युक्त ब्रह्म हूँ। मैं अस्द्रूप देह नहीं हुँ।

अध्याय १५ - सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूतः श्री नारायण गुरु

१. "जन-साधारण में आयुर्वेद और संस्कृत को जीवित रखने का श्रेय ईष़वा जाति के वैद्यों को है" क्यों?

आयुर्वैदिक पद्धति का सम्पूर्ण साहित्य संस्कृत में उपलब्ध था। संस्कृत आयुर्वैद शास्त्रों के विद्वान नम्बूदिरी ब्राह्मण हुआ करते थे, किन्तु उनकी संख्या बहुत कम थी। आयुर्वैदिक पद्धति को जानने केलिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक था। इस महत्वपूर्ण कार्य ईष़वा जाति के लोगों ने निभाया। वस्तुतः केरल का स्मपूर्ण भूभाग ईष़वा वैद्यों और संस्कृतज्ञों से भरा था। इसलिए कहा जाता था कि आयुर्वैद और संस्कृत को जीवित रखने का श्रेय ईषवा जाति के वैद्यों को है।

२. श्रीनारायण गुरु के बचपन और शिक्षा का परिचय दीजिए?

श्री नारायण गुरु का जन्म १८५६ ई में केरल के चेम्बाष़ंती नामक स्थान पर हुआ। यह तिरुवनन्तपुरम से लगभग १२ किलोमीटर की दूरी पर है, उनके पिता माडन और माता कुट्टी थीं। पिता अध्यापन का कार्यकरते थे तथा वैद्य भी थे। श्री नारायण गुरु के मामा बडे संस्कृतज्ञ और वैद्य थे। उन्होंने समाज सुधार कार्य किया।

श्रीनारायण गुरु को बचपन में 'नानु' नाम से पुकारा जाता था। वह शरारती बालक था। देवों की पूजा केलिए आर्पित फल और मिष्ठान्न लेकर ख्राता था और कहता था कि यदि मैं सन्तुष्ट हो जाऊँगा तो भगवान भी प्रसन्न होगा। नानु जब छ वर्ष का था तब उसके चाचा की मृत्यु हो गयी। घर में सभी दुःख्री थे। नानु दुसरे दिन घर से निकलकर जंगल में छिपकर सोच-विचार मे व्यस्त हो गए। घरवालों ने उसे तलाशा। बाद में किसी ने कहा कि नानु जंगल में छिपकर बैठा है। मामा-मामी उन्हें जंगल में विचारमग्न पाया। पूछने पर उत्तर दिया कि चाचा की मृत्यु से दुःख्रित आप सब अब सामान्य हो गये। इस घटना से स्पष्ट है कि श्री नारायण गुरु पहले से ही दार्शनिक थे।

श्री नारायण गुरु की शिक्षा पाँच वर्ष की आयु में शुरु हुई। उनके गुरु चेंबष़ंन्ती मूता पिल्लै थे। वे बडे विद्वान, ज्योतिषाचार्य और सवर्ण थे। फिर उच्चशिक्षा केलिए उन्हें करुनागप्पल्ली भेजा गया। वहाँ के आश्रम में बहुत ईष़वा युवक कुलीन गुरु से शिक्षा पा रहे थे। किन्तु नायर युवक आश्रम में रह सकते थे तो ईष़वा युवक को बाहर रहना पडा। लेकिन आश्रम के निकट ही ईष़वा जाति के एक समृद्ध और

उदार परिवार था जिन्होंने ईष़वा बच्चों को सवर्णों से शिक्षा लेने केलिए अपने घर में निवास दिया था। नानु भी वहाँ रहा। नानु कुशाग्र बुद्धि का था। इसलिए गुरु ने उससे बहुत प्यार करते थे और नेता बनाया। इस कारण से उसे नानु चट्टम्बी पुकारते थे। बाद में नानु को पेचिश की बीमारी पडने के कारण उनके मामा घर वापस ले आए और विद्यार्थी जीवन समाप्त हो गया।

३. नानु का विवाह जीवन कैसा था?

नानु की घुमक्कड प्रकृति और धर्मपरायण जीवन को देखकर संबधियों ने उसका विवाह कराने का निश्चय किया। पहले, वह तैयार नहीं था। लेकिन बाद में सहमत हो गया। लेकिन वैवाहिक रीति-रिवाज़ों ने उन्हें झकझोर डाला। वे ब्रह्मचर्य मार्ग पर लौट आए। फिर पत्नी के घर जाने केलिए मना किया। अन्त में ससुराल जाकर पत्नी से कहा कि तुम्हारा और मेरा मार्ग भिन्न है। तुम अपने मार्ग जाकर खुश रहो और मुझे अपने मार्ग चलने दो।

४. "मै ने ईष़वा शिवलिंग की प्रतिष्ठा की है" किसने कहा? क्यों?

श्री नारायण गुरु की दृष्टि में सभी मानव समान थे। लेकिन उस समय मन्दिर में उच्च जाति को प्रवेश मिलता था। प्रत्येक जाति को अपनी श्रेणी के आधार पर एक दूसरे के पीछे पूजास्थल से निश्चित दूर खडा होना था। यह उनको असह्य था। उन्होंने शिवरात्रि के कुछ पहले घोषणा की कि मैं प्रतीक रूप में शिवलिंग की स्थापना करूँगा। किन्तु मन्दिर निर्माण केलिए कोई व्यवस्था नहीं थी। उन्होंने कहा कि यह समतल चट्टान ही आधार पीठिका होगी। गुरुजी ने अर्धरात्रि को नदी में गोता लगाया और एक पत्थर का टूकडा अपने वक्षस्थल से चिपकाए नदी के बाहर आए। उसे लेकर आँखें मूँद् तीन घंटे खडे रहे। प्रातःतीन बजे गुरुजी ने शिवलिंग को पीठिका पर स्थापित कर अभिषेक किया। एक युवा नम्बूतिरि ब्राह्मण ने उनसे पूछा कि एक ईष़वा होकर शिवलिंग की स्थापना और आभिषेक करने का अधिकार तुम्हें किसने दिया? गुरुजी ने शान्त भाव से उत्तर दिया कि मैं ने ईष़वा शिवलिंग की प्रतिष्ठा की है।

५. श्री नारायण गुरु ने समाज-सुधार केलिए क्या-क्या कार्य किए?

श्री नारायण गुरु ने सामाजिक, न्याय और सर्वधर्म समभाव के क्रान्तिकारी विचार सामने रखे हैं। उन्होंने मन्दिरों में प्रवेश वर्जन की प्रथा का विरोध किया। उन्होंने ईष़वा जाति केलिए मन्दिरों का निर्माण किया। ये उच्चवर्ग के मन्दिरों से कुछ भिन्न है। उन्होंने मन्दिरों के पास तालाब की अपेक्षा स्नानगृह का सुझाव दिया। मन्दिर में जो चढ़ावा पैसे के रूप में मिलता, उसे लोगों के कल्याण कार्य केलिए खर्च करने

को कहा। उनकी राय में घर्मग्रन्थों का पुस्तकालय भी मन्दिर के पास होना चाहिए। मन्दिरों के पुजारी निम्नवर्ग के होने चाहिए।

गुरुजी ने अरुविप्पुरम मे शिवमन्दिर की प्रतिष्ठा के बाद वैकम के चिरयनकिष़ं नामक स्थान पर देवेश्वरम मन्दिर की स्थापना की। कोवलम के निकट कुन्नुमप्पुरा मन्दिर की स्थापना की। करमुक्कु मन्दिर में प्रतीक के रूप में एक प्रोज्वलित दीप रखा और मुरुक्कुमपुष़ां मन्दिर में शिला पर सत्या, धर्म, दया, स्नेह शब्द खुदवाया। कालावनोड मन्दिर में दर्पण पर 'ओम' शब्द मात्र लिखाया।

श्री नारायण गुरु ने वैदिक स्कूल के साथ सरस्वती मन्दिर की भी स्थापना की। उन्होंने शिवगिरि की व्यवस्था को सुधारने के बाद आलवाय में अद्वैत आश्रम की स्थापना की। वहाँ सभी धर्म के व्यक्ति अपने-अपने धर्म के अनुसार पूजा कर सकते हैं। वहाँ एक पुस्तकालय है जिसमें सभी धर्म पुस्तकें हैं और संस्कृत स्कूल है जिसमें सभी धर्मों के छात्र पढ़ सकते हैं।

श्री नारायण गुरु ने कहा कि सभी लोगों को मन्दिर में प्रवेश करने का अधिकार है। उन्होंने स्त्री शिक्षा पर विशेष बल दिया। विधवा विवाह को बढ़ावा दिया। ईष़वा जाति की उपजातियाँ-थिया, बिल्लवा आदि में अन्तर्जातीय विवाह होने केलिए प्रेरणा दी। विभिन्न उपजातियों को एक समुदाय के रूप में ढ़ालने में उन्होंने सफलता प्राप्त की।

गुरुजी ने समाज में प्रचलित अन्धविश्वासों को निकट से देखा कि अवर्ण अपने पूर्वजों, वीरों, पर्वतों, चट्टानों, पाषाणों, नदियों, सर्प, भूत-प्रेत आदि की पूजा करते है। उन मूर्तियों को हटाकर उनके स्थान पर शिव, सुब्रह्मण्य और गणेश की मूर्तियों की स्थापना की। पूजा के नाम पर जो मद्यपान होते थे इसका विरोध किया। मंगलसूत्र (ताली) बान्धने की खर्चीली प्रथा का निरर्थक कहकर बन्द किया।

श्री नारायण गुरु ने समस्त मानव-जाति केलिए जीवन भर काम किया। उन्होंने कहा सभी धर्मों का उद्देश्य एक है। जब नदियाँ समुद्र में मिल जाती है तो उनका अन्तर समाप्त होता है। धार्मिक वैमनस्य दूर करने केलिए उन्होंने ऐसा कहा। उस महान क्रान्तिकारि सन्त का सदेश है–"जो भी धर्म हो, यही पर्याप्त है कि मनुष्य सद्गुण सम्पन्न हो।"उनका, महामन्त्र था–"एक जाति, एक धर्म, और एक ईश्वर मानव का।"

अध्याय १६ - केरल का दलित आन्दोलन और अय्यनकाली

१. 'दलित' नाम के अन्तर्गत कौन-कौन आते थे?

परया, पुलया, कुरवा जैसे अनुसूचित जातियाँ दलित कहलाते थे।

२. अवर्ण के अन्तर्गत कौन-सी जातियाँ हैं?

ईष़व, अरय (मछुआरा), लुहार, सुनार, बढ़ई, परया, पुलया।

३. केरल में दलितों की कैसी स्थिति थी?

केरल में जाति व्यवस्था का पालन सर्वाधिक होता था। जमीदारों और भूस्वामियों के अत्याचारों से इनको कई परेशानियाँ झेलनी पडीं। जानवर इससे बेहतर थे। जानवरों को उनके मालिक छू सकते थे। पर दलितों को छूना तो दूर, सवर्ण हिन्दु उनकी परछाई तक से अपवित्र हो जाते थे और स्नान के बाद शुद्ध हो पाते थे। ये दलित ही मेहनत करके उनको खाने की चीज़ बनाते थे। वे इन चीज़ों को खा सकते थे। दलितों को सार्वजनिक कुओं से पानी लेने का अधिकार नहीं था, न आम रास्ते से गुजरने का या विद्यालयों से शिक्षा पाने का। मन्दिर के दरवाज़े तक इनकेलिए बन्द थे।

४. चान्नार आन्दोलन क्या है?

केरल के सामाजिक बदलाव में ईसाई मिशनरियों का बडा हाथ था। ईसाई मिशनरियों के प्रभाव से नाडार नामक जाति के लोग ईसाई धर्म स्वीकार करने लगे। इस समय (चान्नार) नाडार जाति की औरतों ने चोली पहनना शुरु किया। लेकिन उस समय तक चान्नार जैसी निम्न जाति की औरतें चोली पहनती नहीं थी। उनको चोली पहनना मना था। १८२८ में जब दो औरतें चोली पहनकर चली तो सवर्णों ने उनकी चोली चीर डाली। चान्नारों ने इसका विरोध किया। १८५९ में दो बार इसी तरह की घटनाएँ हुई। अन्त में १८५९ जुलाई २६ को ट्रावनकूर राजा को चान्नार औरतों के वस्त्र पहनने की आज़ादी को मंजूरी देना पडा।

५. दलित लोगों के उत्थान केलिए अय्यनकाली ने क्या-क्या कार्य किए?

दलित लोगों को उनकी पीडाओं और परेशानियों से मुक्त करने का सराहनीय कार्य अय्यनकाली ने किया है। वे सामाजिक क्रान्तिकारी थे। दलितों के अधिकारों को स्थापित एंव सुरक्षित करने की लडाई में वे सबसे आगे थे। उनका जन्म सन् १८६३ अगस्त २८ को तिरुवनन्तपुरम के निकट वेड्डान्नूर में हुआ था। उनके पिता अय्यन और माता माला थी। माता पिता ने उनका नाम काली रखा। लेकिन बडा बनने पर पिता का नाम जोडकर वे अय्यनकाली नाम से जानने लगे।

दलितों की स्थिति सुधारने केलिए उन्होंने सबसे पहले अपने वर्ण के युवकों को संगठित किया। जिस रास्ते से बिल्ली, चूहा, कुत्ता, बैल, गाय आदि जाते हैं उससे दलित घोषित लोग जा नहीं सकते थे। अतःउनका पहला प्रयत्न आम रास्ते से जाने की आज़ादी केलिए हैं।

(१) आम रास्ते से गुज़रने की आज़ादी केलिए

अय्यनकाली का प्रथम लक्ष्य आम रास्ते से गुज़रने का अधिकार प्राप्त करना था। इसकेलिए उन्होंने एक बैलगाडी ख़रीद ली। उस ज़माने में बैलगाडी ख़रीदकर उसमें चढ़ने का अधिकार केवल सवर्णों का था। यह देख़कर सवर्ण लोग कुपित हुए। गाडी में बैठे काली सफेद बनियन और घोती पहने थे। दलितों को सफेद वस्त्र पहनना मना था। कई सवर्ण युवकों ने गाडी रोकी। गाडी में रख़े हथियार लेकर काली नीचे उतरे तो युवक भाग गए। यह बात चारों ओर फैल गयी। सवर्णों ने अवर्णों पर आक्रमण किया। काली ने मानवाधिकार केलिए लडने केलिए अह्वान किया। इसी बात को लेकर काली ने बैठक बुलाई और कई फैसले लिए। इसके अनुसार काली और साथी आरलुम्म्ड बाज़ार पहँचे। बालरामपुरम की गली से वे लोग पैदल चले गए। वहाँ कई लोगों ने उनको रोका। दोनों के बीच मुठ भेड हुई। यही पहली लडाई थी।

(२) स्कूल में प्रवेश मिलने की माँग

दलित बच्चों को स्कूल में प्रवेश मिलना काली का दूसरा लक्ष्य था। इसकेलिए आन्दोलन चलाए परन्तु सरकार अनुकूल नहीं थी। अय्यनकाली निराश नहीं हुए। सन् १९०५ में उन्होंने वेड्डान्नूर में झोंपडी बनाकर पाठशाला की स्थापना की। सवर्णों ने उसपर आग लगाई। काली और साथियों ने उसी जगह दूसरी झोंपडी बनाई। बाद में सरकार को स्कूल में प्रवेश सम्बन्धी आदेश जारी करना पडा।

(३) धर्मंतरण का विरोध

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त से ईसाई मिशनरी भारत आए। धर्म प्रचार के साथ वे दलितों की उन्नति केलिए महान कार्य करते थे। ज़मीन्दारों के पास गुलामी करनेवालों को मालिकों से खरीदकर उन्होंने मुक्त कर दिया। दलितों को उन्होंने अपने स्कूलों में प्रवेश किया। धर्मान्तरण की प्रवृत्ति बढ़ गई। धर्मान्तरित दलित आम रास्ते से चल सकते थे। सवर्णों के पास जा सकते थे। लेकिन मिशनरियों के आने के पहले यहाँ जो ईसाई मौजूद थे वे धर्मान्तरितों के साथ हीन तरह का बर्ताव करते थे। धर्मांतरितों को इन्होंने अस्पृश्य माना। धर्मांतरित दलितों ने अन्य दलितों को निरक्षर काफिर पुकारने लगे। वे अपने रिश्तेदारों से भी अलग रहने लगे। अय्यनकाली ने महसूस किया यह दलित समुदाय की मजबूती केलिए खतरा है। उन्होंने श्रीमूलम् तिरुनाल महाराज के सामने धर्मींतरण को रोकने का निवेदन किया। महाराज ने घोषण की कि आगे धर्मान्तरण नहीं होना चाहिए।

(४) मन्दिर में प्रवेश केलिए प्रयत्न

सारे हिन्दुओं को मन्दिर में प्रवेश केलिए ज़ोरों से माँग उठी रही थी। सरकार ने १९३३ को 'मन्दिर प्रवेश' समिति का गठन किया। लेकिन समिति के सदस्य एकमत न होने के कारण फैसला नहीं हुआ। इधर लोग हिन्दु धर्म छोडकर ईसाई धर्म में जाते थे। अन्त में सरकार को मन्दिर प्रवेश का ऐलान १९३६ को करना पडा। यह सुन महात्मा गाँधी खुश हुए और १९३७ वेड्डान्नूर आए। गाँधीजी ने काली को दलितों का राजा कहा।

(५) साधुजन परिपालन संघ

अय्यनकाली ने महसूस किया कि दलितों की सम्मिलित कोशिश से उन्नति होगी। उन्होंने सन् १९०७ फरवरी में 'साधुजन परिपालन संघ' की स्थापना की। इसके पहले उन्होंने श्रीनारायण गुरु, डा.पल्पु महाकवि कुमार आशान आदि से सलाह किया। इस संस्था से दलितों को सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक क्षेत्रों में उन्नति मिली।

(६) काश्तकारों की हडताल

'साधुजन परिपालन संघ' में दलितों ने सबसे पहले अपने बच्चों को स्कूल में प्रवेश मिलने की बात सोची। उस समय पी. राजगोपालाचारी यहाँ दीवान थे। उन्होंने बताया कि १९०७ से दलितों के

अनुकूल सरकारी आदेश आया है। अफसरों ने उसे छिपा रखा है। काली के साथियों को लेकर स्कूल जाकर पूछा तो उन्होंने कहा कि यह आदेश हमें लागू नहीं है। अय्यनकाली ने सोचा कि दलितों के पसीने की फसल वे खा सकते हैं, परन्तु बच्चों को प्रवेश करें तो छुआ छूत हो जाएगा। काली ने हड़ ताल का आह्वान किया कि जब तक हमारे बच्चे स्कूल में प्रवेश नहीं किए जाएँगे तब तक खेतों में काम नहीं करेंगे। सवर्ण कुपित हुए। कई जगह ज़मींदारों ने मज़दूरों को पीटा। काली ने अन्य माँगे भी रखे- (१) छोटी-छोटी बातों केलिए दलितों को पीटना बन्द करें (२) काश्तकारों को गुलाम न मानें (३) दलितों को आम रास्ते से चलने की अनुमति मिलें। अन्त में १९१० में बच्चों को स्कूल मे प्रवेश होने का आदेश ज़ारी किया।

(७) पत्थर की मालाएँ – चूडियाँ छोडने का आह्वान

उस जमाने में दलित स्त्री पत्थर से बनी मालाएँ और लौह से बनी-चूडियाँ पहनती थी। सोना या चाँदी के आभूषण पहनना मना था। काली की राय में ये तो गुलामी के निशान थे। इसलिए उन्होंने इन आभूषणों को छोडने का अह्वान किया।

(८) दारु पीने का विरोध

आय्यनकाली ने दलितों को आह्वान किया कि वे दारु न पिएँ। औरतों को भी वे सचेत किए।

दलितों की मुक्ति एवं उन्नति केलिए अय्यनकाली ने बडा प्रयास किया। वे सचमुच केरल के दलितों के मसीहा है।

अध्याय १७
केरल के ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता

१. केरल के किन-किन रचनाकारों को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला?

भारतीय ज्ञानपीठ का सबसे पहला पुरस्कार १९६५ में जी शंकर कुरुप को १९५० में प्रकाशित 'आटक्कुषल' शीर्षक कविता संकलन को मिला। १९८० के ज्ञानपीठ पुरस्कार एस.के.पोट्टोक्काड नाम से विख्यात शंकरनकुट्टी पोट्टेक्काड को मिला। १९८४ का ज्ञानपीठ पुरस्कार का हकदार मलयालम के महान रचनाकार तकषी शिवशंकरपिल्लै है। तकषी मलयालम के विश्व प्रसिद्ध उपन्यासकार हैं। १९९५ का ज्ञानपीठ पुरस्कार केरल की नयी साहित्यिक प्रवृत्ति की स्वीकृति के रुप में विख्यात कथाकार एम. टी. वासुदेवन नायर को समार्पित किया गया। अन्त में २०१० का ज्ञानपीठ पुरस्कार मलयाम के विख्यात कवि ओ.एन.वि कुरुप ने भी प्राप्त किया।

२. 'ओटक्कुषल' की विशेषताएँ क्या है?

ओटक्कुषल मलयालम की बहूचर्चित रचना है। उसमें संकलित कविताओं में न केवल केरल की कविता के परिवर्तनाकार का संकेत है अर्पितु समस्त भारत के सन्दर्भ मे हुए काव्यान्दोलन और उसके संस्कार है। वह भारतीय कविता के युगान्तर का स्पष्ट प्रमाण है। बाँसुरी अपने आप में प्रतीकत्व लिये हुए हैं। उसकी सुर लहरियों में कवि की आत्मा का स्पन्दन है। वह स्वयं युग द्रष्टा एवं भोक्ता कवि का प्रतिबिंब है।

३. जी.शंकर कुरुप की कविताओं की विशेषताओं का परिचय दीजिए?

ओटक्कुषल (फ्राँसुरी) में कवि की रुमानी चेतना दार्शनिक क्षितिज को छू गयी है। प्रकृति की चिर परिवर्तनशील संकल्पना पर आधारित सत्य, शिव और सौन्दर्य की विराट कल्पना ने शंकर कुरुप की कविता को अपूर्व ओजास्विता प्रदान की है। प्रेम सदा 'जी' की कविता का विषय रहा है। उसमें ब्रह्म चैतन्य और प्रकृति के पारस्परिक मिलन के रागात्मक सम्बद्ध की सूक्ष्मता है। निर्मल प्रेम की उन्मुक्त क्रान्ति ने उनकी कविता को रुप और भाव की दृष्टि में आकर्षणीय फ्रनाया है। कभी.कभी उनकी भाषा भाव से बोझिल और दुरुह है। कल्पना की सूक्ष्मता, भाषा की दुरुहता, नयी प्रतीकात्मकता के कारण वे मिस्टिक (रहस्यवादी) कवि कहलाए गये। कवि की भावना के सत्य और युग-धर्म दोनों को समाविष्ट करने योग्य प्रतीकों बिम्बों की कल्पना शंकर-कुरुप ने बडी सफलता से की है।

४. एस.के.पोट्टेक्काड की रचनाओं की विशेषताएँ क्या-क्या है?

एस के पोट्टेक्क्राड मलयालम के लोकप्रिय रचनाकार थे। उन्होंने कहानी, उपन्यास. कविता तथा घुमक्कड साहित्य से लोगों को अपनी कलम का जादू दिखाया। केरल उनको कहानी कला का राजशिल्पी मानता था। कथा साहित्य में देवन, तकषी तथा बशीर ने जो प्रतिमान बनाया था उसको उन्होंने तोडा। मलयालम भाषा की गद्यात्मक अभिव्यंजना की क्षमता और सौन्दर्य छवि का अनुभव युगीन जीवन सन्दर्भ में करा देने में एस.के. समर्थ थे। उनकी रचनाएँ केरल की युवा पीढ़ी को अच्छी लगी। रुमानी भावना को अभिव्यक्ति देते समय उन्होंने यथार्थ बोध के साथ वातावरण और चरित्र का सृजन किया है। उनमें मानवीय दृष्टि और लेखकीय ईमानदारी की भावना प्रबल थी। केरल के गाँवों प्रान्तों और बडे-बडे शहरों की गलियों में बिखरे मानवीय जीवन को एस.के की कथात्मक प्रतिभा ने बटोर लिया। भाव की सघनता, भाषा का जादू, विचारों की बुनावट तथा रचना की सहजता के कारण 'विषकन्या', 'तेरुविन्टे कथा', और 'ओरु देशत्तिन्टे कथा' आदि रचनाएँ मलयालम के उपन्यासों में बेजोड है।

५. तकषी दलितों-पीडितों का चितेरा है-स्पष्ट कीजिए?

तकषी केरल के दलितों पीडितो की कारुणिक गाथा के उद्गाता है। उनका कथा साहित्य केरल के सामाजिक जीवन के विभिन्न स्तरों की झाँकी प्रस्तुत करता है। नौतिक मूल्य की आड में जीवन का जो ढ़ोंग चालू है उसका तक़षी ने विरोध किया। सामाजिक मान्यताओं को उन्होंने चुनौती दी। किसानों और मज़दूरों का चित्रण उन्होंने किया। उन्होंने नारी जीवन की भिन्न समस्याओं का रूपांकन किया। शोषण का ज़मींदारी प्रथा का, सामाजिक बन्धन का उन्होंने विरोध किया। जमींदारी की जगह पर कुट्टनाटु में जो नयी वणिक्वृत्ति उभरी और उससे जो पूँजीपति चेतना उत्पन्न हुई उसे तकषी ने उजागर कर दिया।

६. "एम.टी. नयी संवेदना और नयी शौली का कथाकार है" व्यक्त कीजिए?

सामाजिक प्रगती को लक्ष्य बनाकर लिखनेवाले रचनाकारों की श्रेणी में एम.टी नहीं है। वे आत्मकेन्द्रित थे। समाज और परिवार से उपेक्षित व्यक्ति के 'अहं' को उन्होंने प्रस्तुत किया है। निला नदी के किनारे के निम्न मध्यवर्गीय नायर खानदान के पतन का जीवन्त चित्र प्रस्तुत करने के साथ व्यक्ति के 'स्वत्व' के अन्वेषण की त्वरा का चित्रण भी उन्होंने बडी सफलता से किया है। एम. टी. ने पाठकों को एक नया भावबोध दिया। एम. टी. के 'नालूकेट्टू' से लेकर 'रण्टामूषम' तक के उपन्यासों का शिल्प मलयालम उपन्यास के सन्दर्भ में नवीन ही था। मात्र मुख्यपात्र को केन्द्र में रखकर कहानी कहने की उनकी शैली अत्यन्त आकर्षक है। 'नालुकेट्टु' मातृसत्तात्मक संयुक्त परिवार का जीता जगता चित्र प्रस्तुत

करता है। नायर ख़ानदान के पतन दस्तावेज के साथ उपेक्षित और प्रताडित व्यक्ति के बदला लेने के मौके की ख़ुदकुशी और अहं की भावना इसमें हैं। 'असुरवित्तु' बिलकुल भिन्न है। नालुक्ट्टु में नायर ख़ानदान की दीनदशा है तो असुरवित्तु इसका दूसरा आयाम है। 'मंजु और कालम' में प्रत्याशाभरी जीवनदृष्टि और अर्न्तद्वन्द्व का चित्रण है। 'रण्टामूषम्' इतिहास-पुराण को नयी शैली में प्रस्तुत करने की दिशा में एक नया प्रयोग है।

अध्याय १८ - एकलव्य

१. हिरण्यधनु कौन है?

हिरण्यधनु भील नामक राज्य का राजा थे। वे सब केलिए सहारा थे। अपने राज्य के आदिवासियों की उन्नति केलिए राजा हिरण्यधनु हमेशा प्रयत्न करते थे। उनकी उन्नति का सम्बल उनका सतत प्रयत्न था। वे सत्यनिष्ठा के व्रत का पालन करनेवाले थे। उनकी स्नेह और आस्था सब लोगों पर बरसती थी।

२. एकलव्य कौन है?

भील राज्य के राजा वीर हिरण्यधनु का पुत्र था एकलव्य। हिरण्यधनु के समान उनका पुत्र एकलव्य भी वीर धनुर्धर था। हिरण्यधनु केलिए वह प्राणों से भी प्यारा था। वह होनहार बालक था।

३. हिरण्यधनु क्यों चितिंत थे?

हिरण्यधनु अपना पुत्र एकलव्य को धनुर्विद्या में पारंगत करना चाहते थे। लेकिन वे लोग भीलजाति के थे। भीलजाति अछूत था। इसलिए अछूत अभिशाप के कारण उन्हें धनुर्विद्या पढ़ाने केलिए कोई तैयार नहीं होगे। जाति-पाँति के भयानक भेद के कारण अपने पुत्र को गुणी बनाने में असमर्थ होकर हिरण्यधनु चिंतित थे।

४. एकलव्य खण्डकाव्य का सारांश लिखिए और स्पष्ट कीजिए कि इसमें लेखक ने समाज की कौन-सी समस्या को उजगार किया है?

डा शोभानाथ पाठक हिन्दी के समकालीन कवियों में प्रमुख है। उनका प्रमुख खण्डकाव्य है एकलव्य। इसमें उन्होंने महाभारत की एक छोटी सी घटना के आधार पर समाज की ओर इशारा किया है। सामाजिक विसंगतियों को पाठकों के सम्मुख रखने में उन्होंने सफलता पाई है।

हस्तिनपुर के पास एक बीहड वन में भीलों का राज्य था। हिरण्यधनु भील राज्य के राजा थे। अपने राज्य के आदिवासियों की उन्नति केलिए हिरण्यधनु हमेशा प्रयत्न करते थे। उनकी उन्नति का सम्बल सतत प्रयत्न था। वे सत्यनिष्ठा व्रत का पालन करते थे। उनकी स्नेह और आस्था सभी लोगों पर बरसती थी और राज्य सम्पन्न भी रहा।

हिरण्यधनु का पुत्र था एकलव्य। पिता के समान वह भी वीर था। वह हिरण्यधनु केलिए प्राणों से भी प्यारा था। अपने होनहार पुत्र को देखकर हिरण्यधनु के मन में उसको धनुर्विद्या में पारंगत करने की इच्छा हुई। लेकिन वे भीलजाति के थे और भील अछूत लेग थे। वे सोचने लगे कि अपने पुत्र केलिए किससे सहारा मिलेगा। भील होने के नाते उसे पढ़ाने केलिए कोई तैयार नहीं होंगे। अपने पुत्र को गुणी बनाने में असमर्थ होकर हिरण्यधनु व्याकुल हो उठे।

अपने पिता को चिंतित देखकर एकलव्य ने इसका कारण पूछा। हिरण्यधनु ने बताया कि बेटा तुम्हें धनुर्विद्या में समर्थ बनाना है। लेकिन अछूत हमारे लिए अभिशाप है। सब ईश्वर के सन्तान है। उनके सामने किसी भेद-भाव नहीं है। लेकिन यह कुप्रथा समाज में व्याप्त है और हमें कचोट रही है। ऐसी स्थिति में मैं क्या करूँ? पिता की व्यथा देखकर एकलव्य ने कहा कि चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं। आचार्य द्रोण बडे ही उदार व शिष्य-वत्सल है। वे कौरव-पांडवों के शिक्षक है। अतः उनसे ही मैं शिक्षा ग्रहण करूँगा। वे ही मेरे गुरु होंगे। श्रद्धा-स्नेह और गुरु भक्ति से मैं उनके सामने सिर झुकूँगा। द्रोणाचार्य समदर्शी है। आप तनिक भी चिन्ता न कीजिए। मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं धनुर्विद्या में सफल हो सकूँ। इसप्रकार मन में दृढ़ संकल्प लेकर अदम्य इच्छा के साथ वह गुरु घर की ओर चला।

एकलव्य के श्रद्धापूर्ण प्रणाम, गुरुभक्ति और धनुर्विद्या सीखने की तीव्र अभिलाषा देखकर द्रोणाचार्य चकित् होते हैं। लेकिन वे जब यह जानते हैं कि यह भीलजाति का हैं तो उन्होंने कहा कि तुम अछूत हो। शिक्षा का तुम्हें अधिकार नहीं। तुम्हें धनुर्विद्या सीखने की ज़रूरत भी नहीं। शुद्रों को मैं शिष्य बना नहीं सकता। यह कुल केलिए कलंक है। साथ ही साथ क्षत्रिय राजकुमारों ने उसका उपहास भी किया कि तुम जंगल जाकर मौज मनाओ। शूद्र शब्द का अपमान एकलव्य के मन को मथने लगा। निराश होकर वापस चलें तो नारद मुनि को देखा। उन्होंने कहा कि पुत्र एकलव्य, तुम निराश मत बनो। तुम समर्थ हो। जहाँ सकल्प, साधना और लगन है वही सफलता कदम चूमेगी। तुम्हारी आस्था अचल है। अतःतुम गुरु की एक मूर्ति मिट्टी से बनाओ और उसे गुरु मानकर निष्ठा के साथ धनुर्विद्या सीखो। गुरु के प्रति निष्ठा और भक्ति से तुम्हें ज्ञान प्राप्त होगा।

नारद का उपदेश मानकर एकलव्य ने गुरु की मूर्ति बनाकर श्रद्धा-भक्ति के साथ धनुर्विद्या सीखने लगा। आठों याम शरसंधान, लक्ष्य बोध यही उसे घुन था। अन्त में रण कौशल की कला सीखकर वह रणधीर हो गया।

एक दिन कौरव-पांडव शिकार खेलने जंगल आए तो उनके साथ उनका एक कुत्ता भी था। एकलव्य जंगल में अभ्यास करता था। कुत्ता इधर-उधर दौडा तो एकलव्य को देखकर भौंकने लगा। कुत्ते का मुँह बंन्द

करने की इच्छा से एकलव्य क्षणभर में सात तीर-चलाकर उसका भूँकना बंद कर देता है। कुत्ता कुरु-पाण्डव के पास लौट जाता है तो यह दृश्य देखकर आश्चर्य होते हैं। वे उस वीर धनुर्धर को देखने केलिए कुत्ते के पीछे आते हैं। एकलव्य ने अपने को द्रोणचार्य का शिष्य कहा तो राजकुमार चकित होते हैं। कुरु-पाण्डव एकलव्य की सफलता पर ईर्ष्यालु होते हैं। द्रोणाचार्य ने वादा किया था कि अर्जुन ही इस संसार का श्रेष्ठ धनुर्धर होगा। इसलिए वे एकलव्य की सफलता को निष्फल करने का षड़यन्त्र सोचते हैं। अन्त में द्रोणाचार्य द्वारा अंगठे की गुरुदक्षिणा माँगते हैं। द्रोणाचार्य को तो अपने वचन का पालन भी करना था। जब द्रोणाचार्य गुरुदक्षिणा माँगने केलिए एकलव्य के पास आते, तब वह गुरु की कृपा देखकर सन्तुष्ट होता है और सहर्ष अंगठा काटकर गुरु को सौंप देता है। कटा हुआ अंगूठा हाथ में ले लेते तो उनके हृदय में हलचल मच जाती है। वे पागल जैसे होकर सोचते हैं कि आखिर वे भी तो मनुष्य है। अपने अतीत की यादें द्रोण की आँखों के सामने आती है कि विद्वत्ता में श्रेष्ठ स्थान रखते हुए भी वे तिरस्कृत थे। निर्धनता उन्हें कचोट दिया कि अपने एकमात्र पुत्र को दूध पिलाने में भी वे सक्षम नहीं थे। आटे के पानी को दूध कहकर पिलाने का छल भी अपने पुत्र से उन्हें करना पडा। धनुर्विद्या में विद्वान होने पर भी उसे निर्धनता से तरसना पडा है। निर्धनता से बचने केलिए बचपन का मित्र राजा द्रुपद के पास चले तो वहाँ भी अपमान सहना पडा। निर्धनता और अपमान से आहत द्रोण हस्तिनापूर में कौरव-पाण्डव के शिक्षक बन गये। उस समय भीष्म के इस शर्त को स्वीकार करना पडा कि आगे क्षत्रियों को ही धनुर्विद्या सिखाऊँगा। निर्धनता और अपमानों से आहत पागल इन्सान किसी की प्रतिभा या गुण को नहीं देखेंगा।

अतीत की बात उनके मन को ज्यादा दुःखित करने लगीं। साथ ही एकलव्य का शोणित रूप उन्हें तडपाता है और वे पश्चाताप की अग्नि में धधकने लगे। मन ही मन एकलव्य की वीरता का गान गाने लगे।

छुआछूत की समस्या युगों से आज तक किसी न किसी रूप में दिखाई देती है। एकलव्य खण्डकाव्य द्वारा समाज की इस संकीर्णता को उजागर करना कवि का लक्ष्य है। गुरु और शिष्य की यह गौरव गाथा युग केलिए यही अनुपम सन्देश देता है कि जाति-पाँति का भेद-भाव मिटाओ। लेकिन आज भेदभाव केवल जाति के रूप में ही नहीं अन्य अनेक रूपों में भी समाज में मौजूद है, जिसको हमें पहचानना चाहिए।